Con. 3. XI.6.49
320

अंक 11
संख्या 6

शनिवार
19 नवम्बर
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ
संविधान का मसौदा–(जारी) 3815-3856

भारतीय संविधान सभा

———————

शनिवार, 19 नवम्बर, सन् 1949 ई.

———————

भारतीय संविधान सभा कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 10 बजे, अध्यक्ष महोदय, (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

———————

संविधान का मसौदा — (जारी)

*__अध्यक्षः__ हम अब वाद-विवाद को जारी रखेंगे। श्री कामत।

*__श्री एच.वी. कामत__ (मध्य प्रदेश तथा बरारः जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं. डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये प्रस्ताव का सीमित तथा सशर्त समर्थन करता हूं। श्रीमान, हम भारत के लोग एक लम्बी यात्रा के अन्त पर पहुंच चुके हैं। किन्तु यह एक अधिक लम्बी, श्रमपूर्ण तथा जोखिमपूर्ण यात्रा का प्रारंभ है। कई दशाब्दियों के संघर्ष के बाद हम स्वतंत्रता के लक्ष्य पर पहुंचे हैं। इन दशकों में हम ने भाग्य के कई उलट फेर देखे तथा जिन नेताओं ने हमारा पथ प्रदर्शन किया उनमें से कई आज हमारे बीच में नहीं रहे हैं। भारतीय स्वभाव के अनुरूप हमारा संघर्ष, हमारी जागृति, आध्यात्मिक पुनरुत्थान से आरम्भ हुई थी, जिस का नेतृत्व रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द तथा स्वामी दयानन्द ने किया था। इन आध्यात्मिक नेताओं के पश्चात् राजनैतिक जागृति और सांस्कृतिक पुनरुत्थान हुआ जिस के पथ प्रदर्शक, नेता तथा प्रवर्तक लोकमान्य तिलक, अरविन्द और महात्मा गांधी थे, तथा अंततः किन्तु किसी से कम नहीं, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस थे। परमात्मा का धन्यवाद है कि, उन दिनों के नेता, आप जैसे नेता, श्रीमान, और पंडित नेहरू तथा सरदार पटेल अब भी हमारे साथ हैं। जो हमें उस लक्ष्य तक पहुंचायेंगे जो महात्मा गांधी ने हमारे लिये निश्चित किया था। महात्मा गांधी ने जो लक्ष्य बनाया था वहां अभी हम नहीं पहुंच पाये हैं और भारत को उस लक्ष्य तक पहुंचाना ही आज इस सभा का और भारत के लोगों का उद्देश्य है, यही उनके सामने काम है।

स्वतंत्रता के महान संघर्ष में समस्त भारत ने भाग लिया था। सबसे उत्तर में कश्मीर में, मेरे माननीय मित्र, शेख अब्दुल्ला ने उस संघर्ष में भाग लिया था, और वीरतापूर्ण भाग लिया था। भारत के उत्तर-पश्चिम में, जो आज दुर्भाग्य से हमसे अलग कर दिया गया है, खान अब्दुल गफ्फार खां और उनके भाई डॉ. खान साहिब राष्ट्रीय संघर्ष में अग्रसर थे। भारत का वह भाग अब हमारे साथ नहीं है, किन्तु हमें आशा और विश्वास है कि जो भाग हमारे पास रहा है तथा जो भाग हमारे पास से चला गया है उनमें जो अंतर है वह शीघ्र ही दूर हो

[श्री एच.वी. कामत]

जायेगा और हमारे संबंध दिन प्रति दिन अधिक सुखद बन जायेंगे, और जैसे समय बीतता जायेगा पाकिस्तान तथा भारत अत्यन्त मैत्रीपूर्ण भावना के साथ रहेंगे।

यह दुर्भाग्य है कि यह सभा एक पूर्ण सभा नहीं है। हमारे देश के दो एककों विंध्य प्रदेश तथा हैदराबाद के प्रतिनिधि अब भी इस सभा में नहीं हैं। मुझे आशा है कि उन दो एककों, हैदराबाद तथा विंध्य प्रदेश के प्रतिनिधि, इस सभा के जनवरी में समाप्त होने से पूर्व हमारे साथ आ बैठेंगे।

इस सभा ने जो संविधान निश्चित किया है उसे मैं केन्द्रीयकृत संधान कह सकता हूं जिस का बाह्य रूप संसदीय लोकतंत्र का है। हमने बहुत लम्बी चौड़ी प्रस्तावना रखी है, किन्तु श्रीमान, भगवान के नाम के बिना मुझे तो वह थोथा ढोल ही दिखाई देती है; हमने प्रस्तावना में न्याय, स्वतंत्रता, समता और बन्धुता के अकाट्य सिद्धांतों की उद्घोषणा की है, किन्तु यदि हम अन्दर देखें और संविधान को पढ़ें तो हमें यह देखकर खेद होगा कि इन सिद्धान्तों को काफी नरम कर दिया गया है। मेरे कई मित्रों ने यहां संविधान में अपनी बुद्धि के अनुसार सुधार करने का प्रयत्न किया है तथा हममें से कुछ सदस्य कुछ हद तक सफल भी हुए हैं। अन्ततः ईश्वर को संविधान में स्थान मिल ही गया। यद्यपि वह राज्य के विविध पदाधिकारियों द्वारा ली जाने वाली शपथ के प्रपत्र में ही रखा गया है। मेरे मित्रों ने, जिनके नामों का मैं आज विशेषतः उल्लेख करूंगा, अर्थात् प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना डॉ. पी.एस. देशमुख, श्री आर.के. सिधवा, श्री महाबीर त्यागी, पं. ठाकुर दास भार्गव, श्री नज़ीरुद्दीन अहमद, प्रो. के.टी. शाह, पंडित हृदय नाथ कुंजरू तथा श्री ब्रजेश्वर नाथ कुंजरू ने और अंततोगत्वा मैं ने भी, सब ने अपने अपने प्रकार से यह प्रयत्न किया कि संविधान को प्रस्तावना के अनुरूप बनाया जाये, किन्तु मैंने देखा कि मसौदा समिति की कुंडली सबल थी। मैंने देखा, श्रीमान, कि नवग्रह के अतिरिक्त तथा दशमग्रह के अतिरिक्त, दो और ग्रह इकट्ठे थे जिन्होंने अन्य ग्रहों के अशुभ प्रभाव को नष्ट कर दिया—और वे ग्रह थे पंडित नेहरू तथा सरदार पटेल। एक ज्योतिष सूत्र है ''कि कुर्वन्ति ग्रहा सर्वेयस्य केन्द्रे बृहस्पति"। केन्द्र में बृहस्पति के होने से अन्य ग्रहों का प्रभाव बहुत कम हो गया। वह अधिक नहीं पड़ा।

***पंडित बालकृष्ण शर्माः** राहु और केतु कौन थे?

***श्री एच.वी. कामतः** मैं यह विनिश्चय करना पंडित बालकृष्ण पर छोड़ देता हूं कि वे कौन थे।

मैं कह रहा हूं कि यह संविधान संधानीय है जिसका मुख संसदीय लोकतंत्र है। महात्मा गांधी चाहते थे कि भारत में विकेन्द्रित लोकतंत्र हो। उन्होंने प्रसिद्ध अमरीकी लेखक लूइ फिशर से कुछ वर्ष पहले कहा था "भारत में सात लाख गांव हैं और प्रत्येक गांव को उसके नागरिकों की इच्छा के अनुसार संगठित करना

चाहिये और जो सब मतदान करें।" फिर सात लाख ही मत होंगे, 40 करोड़ नहीं। दूसरे शब्दों में प्रत्येक गांव का एकमत होगा। गांव जिला प्रशासन को चुनेंगे; जिला प्रशासन प्रांतीय प्रशासन को चुनेंगे और वे फिर राष्ट्रपति को चुनेंगे जो कार्यपालिका का प्रधान होगा। लुई फिशर ने जिसे यह योजना बताई गई थी, बात काट कर कहा "यह तो सोवियत व्यवस्था से बहुत मिलती जुलती है।" और गांधी जी ने उत्तर दिया "मुझे उसका पता नहीं था। मैं इस बात की परवाह नहीं करता।"

श्रीमान, बुरा हुआ या अच्छा हुआ—मुझे आशा है अच्छा ही हुआ—कि हमने इस योजना को छोड़ दिया और हमने एक भिन्न योजना बना ली, अंशतः इस कारण कि हम कठिन संक्रमणकाल में हैं। एक समय आयेगा जब भारत स्थिर तथा शक्तिशाली बन जायेगा, और मुझे आशा है कि उस समय हम फिर पंचायत राज अर्थात् विकेन्द्रित लोकतंत्र की पुरानी योजना को अपनायेंगे, जिसमें ग्राम-एकक होंगे जो भोजन, वस्त्र तथा मकान के विषय में स्वावलंबी होंगे और अन्य मामलों में परस्परावलम्बी होंगे। मुझे आशा है कि हम बाद में पंचायत राज को पुनः अपनायेंगे, श्रीमान, मेरे विचार में वही एक व्यवस्था है जिस से भारत और संसार का त्राण हो सकता है और जिससे मैं आध्यात्मिक साम्यवाद कह सकता हूं, मेरे दिमाग में भौतिकवाद का साम्यवाद नहीं है। मेरे दिमाग में आध्यात्मिक साम्यवाद है। यही बात गांधी जी के दिमाग में थी जब कि उन्होंने भावी-शासन व्यवस्था की भावना को इस आधार पर रखा था कि मानवीय मामलों पर देवत्व का नियंत्रण होगा। उनका अभिप्राय आध्यात्मिक साम्यवाद से ही था। केवल उसी से विश्व का त्राण हो सकता है। आज, अणुबम तथा 'आत्मन' के मध्य जो संघर्ष है उसमें आत्म शक्ति की ही विजय होगी।

अब प्रस्तावना तथा संविधान के विषय को फिर लेता हूं, मैं देखता हूं कि जहां तक न्याय का संबंध है, संविधान में उन लोगों के लिये अच्छी व्यवस्था कर दी गई है। जो न्याय के आसनों पर प्रतिष्ठित होंगे वे उन लोगों से अच्छी स्थिति में होंगे जिन्हें न्याय के मंदिरों की शरण लेनी होगी। मसौदा समिति को उन प्रसिद्ध पदधारियों से प्रेम था जो उन न्याय के मंदिरों में अध्यासीन होंगे और मंदिरों के विनीत भक्तों से नहीं था। संविधान का मसौदा वकीलों ने बनाया था, अतः शायद यही होना अनिवार्य था, जैसे कि संस्कृत श्लोक में लिखा है "नीलकागतर्मापि कुटिलं न भवति सर लंशुनः पुच्छम्"। वकीलों का पक्षपात नहीं हटाया जा सकता था और इसी लिये संविधान में न्यायाधीशों को अनुचित रूप से मोटा करने का प्रयत्न किया गया है।

फिर हम देखते हैं कि इसमें आपात उपबंध है और अनुच्छेद 22 है—पता नहीं यह अनुच्छेद मूलाधिकारों में कैसे आ गया। किसी व्यक्ति को बिना मुकद्दमे के तीन महीने या अधिक के लिये निरुद्ध होने का अधिकार है इन उपबंधों से प्रस्तावना के व्यक्तिगत स्वतंत्रता विषयक सिद्धान्त पर पानी फिर जाता है। उनसे व्यक्तिगत स्वतंत्रता को जकड़ दिया गया है। मैं यह स्पष्ट बताना चाहता हूं कि मैं पूर्ण व्यक्तिगत स्वतंत्रता का समर्थक नहीं हूं। मैं व्यक्तिगत स्वतंत्रता उसी हद तक चाहता हूं कि उससे राज्य की सुरक्षा को क्षति न पहुंचे। उस उद्देश्य से मैंने कई संशोधन पेश किये। वे स्वीकृत नहीं हुए। फिर समता के विषय में, हम देखते

[श्री एच.वी. कामत]

हैं कि कुछ उपबंध हैं जिनसे वैसी ही समता प्रदान की गई है जो बिल्ली तथा चूहे में होती है या गधे तथा घोड़े में होती है। जहां तक बन्धुत्व का संबंध है, मैं अनुभव करता हूं कि हमने मातृत्व का प्रेम तथा आदर केवल स्थायी सेवाओं के लिये ही प्रदर्शित किया है, विशेष उच्चतर सेवाओं तथा राज्यों के उच्च पदाधिकारियों के लिये, जिनका मैं पहले ही निर्देश कर चुका हूं। मैं नहीं समझता कि इसमें कुछ अत्युक्ति है कि हम सद्भावना के साथ विनायक बनाने के लिए बैठे थे किन्तु संस्कृत उक्ति के अनुसार वह वानर बन गया:

विनायकं प्रकुर्वाणो रचयामास वानरम्।

हमने जो विनायक बनाया है वह गणेश की मूर्ति के समान न होकर वानर सा लगता है।

इन सब बातों के होते हुए भी इस संविधान में कुछ अत्यन्त अच्छी बातें हैं। इसीसे मैं अंशत: इस का स्वागत करता हूं।

राज्यों के एकीकरण के विषय में उपबंध, जिनका सब श्रेय सरदार पटेल को है और अल्पसंख्यकों के संबंध में उपबंध, जो प्रधानत: उनके प्रयत्नों का फल है, बहुत अच्छे हैं। फिर संपत्ति के विषय में भी उपबंध है। हमने उसे पूर्णत: न्याय्य नहीं बनाया है। यह भी संविधान में एक अच्छी बात है। हमने धार्मिक स्वतंत्रता को प्रत्याभूत किया है। यह एक और महत्वपूर्ण बात है। हमने भाषा के प्रश्न का संतोषजनक हल निकाल लिया। फिर, जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूं, शपथ का भी प्रश्न है। राज्य के प्रतिष्ठित अधिकारियों द्वारा ली जाने वाली शपथ में ईश्वर का नाम रखा गया है। फिर राज्य की नीति के निदेशों में ग्राम पंचायतों का उपबंध है। यद्यपि डाक्टर अम्बेडकर ने सबसे पहले गांवों को बहमबाजी और अज्ञानता या वैसी ही बातों का केन्द्र बताया था, पर अच्छा ही हुआ कि हमने निदेशक सिद्धान्तों में ग्राम पंचायतों का उपबंध रखा है। वे सब अच्छी बातें हैं और मैं उनका हार्दिक स्वागत करता हूं। फिर हमने खिताबों का अंत कर दिया है जो बेहूदे भेद भाव थे। अस्पृश्यता को भी समाप्त कर दिया गया है जो हिन्दू समाज का कलंक थी। किन्तु अन्य बातें हैं जिनसे संविधान की समन्वयता तथा सौंदर्य नष्ट हो जाता है। जैसाकि मैंने कहा है, इस देश में संसदीय लोकतंत्र होगा। मुझे आशा है कि वह सफल होगा। दुर्भाग्य से हमारे देश में कई बाधायें हैं, हमारी सामाजिक व्यवस्था जाति-उपजाति पर, मत मतान्तरों पर और ऊंच नीच की भावनाओं पर तथा प्रबल पक्षपात आदि पर आधारित है जो हमारी मनोवृत्ति का अभिन्न भाग है। इनसे लोकतंत्रात्मक दृष्टिकोण के विकास में बाधा पड़ती है, और जिस वायु में हम स्वास लेते हैं, वह भी दूषित हो जाता है। ये बातें जान बूझ कर नहीं की जातीं वरन्, अर्ध-जानकारी में की जाती हैं। फिर, श्रीमान, राज्य तथा नागरिक के बीच जो असंख्य संपर्क होंगे, प्रत्येक लोकतंत्र का रणक्षेत्र है, उनमें से केवल तिल के बराबर अनुपात न्यायालयों के क्षेत्राधिकार में होगा, यद्यपि संविधान के मसौदे में उनका बहुत विस्तार था। मेरे विचार में उनसे लोकतंत्र की पूर्ण व्यवस्था नहीं बनती। उनसे शक्ति को वश में करने की समस्या हल नहीं होती। मुझे आशा है श्रीमान् कि जो लोग संविधान को क्रियान्वित करेंगे उनमें लोकतंत्रात्मक भावना पर्याप्त होगी। संविधान तो केवल शुष्क अस्थियां है। आखिर, हमें, भारत के लोगों

को ही संविधान की शुष्क अस्थियों में जीवन का संचार करना पड़ेगा। मुझे आशा है कि उस पर सहयोग की भावना से अमल होगा, भारत को एक महान राष्ट्र बनाने की भावना से, संसार के लिये उसे एक पथप्रदर्शक ज्योति बनाने की भावना से अमल होगा जिसके नीचे कि संसार के सब राष्ट्र भारत के प्राचीन किन्तु नवीन उपदेश को सुनने के लिये, शान्ति, समन्वय तथा प्रेम के उपदेश को, जो हिमालय की ऊषा के सुरभित प्रकाश से सिंचा हो, सुनने के लिये एकत्र होंगे। 26 जनवरी 1950 के दिन हमारे यहां जो समारोह होगा उसके विषय में मैं एक सुझाव देना चाहता हूं। मेरा सुझाव यह है, श्रीमान, कि गणराज्य की उद्घोषणा अर्ध-रात्रि के समय नहीं होनी चाहिये जैसा कि अगस्त 1947 में किया गया था, किन्तु सूर्योदय से जरा पहले होनी चाहिये क्योंकि यही भारतीय परंपरा है कि सूर्योदय से पूर्व पहले प्रहर ब्राह्मी मुहुर्त कहलाता है। उस दिन प्रातःकाल तीन और छः के बीच में हमें गणराज्य की उद्घोषणा करनी चाहिये और संविधान का उद्घाटन करना चाहिये। यदि हम सूर्योदय से जरा पूर्व ही ऐसा करेंगे तो हमारे देश के भविष्य के लिये अच्छा रहेगा।

मैं एक और बात कहना चाहता हूं, श्रीमान, और वह यह है कि हम भारत के लोग अपनी आध्यात्मिकता को तथा अपनी प्राचीन परम्पराओं को नहीं भूलेंगे। स्वामी विवेकानन्द ने ही कहा था कि जिस दिन भारत ईश्वर को भूल जायेगा, जिस दिन वह आध्यात्मिकता को त्याग देगा, उस दिन वह मर जायेगा, और उस दिन वह संसार में कोई शक्ति नहीं रहेगा। मुझे आशा है कि हम अपनी परम्पराओं को बनाये रखेंगे, चाहे हम प्रस्तावना में भगवान के नाम को रखना भूल गये। आइये, हम इस संविधान को दैविक पथप्रदर्शन की भावना से दैविक अनुकम्पा तथा आशीर्वाद के अधीन, क्रियान्वित करें। महात्मा गांधी अपनी प्रार्थनाओं में कहा करते थेः

"सब को सन्मति दे भगवान।"

स्वामी विवेकानन्द भारत को जगाने के लिये कहते हुए यह वेद मंत्र कहते थेः

"उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरानिबोधत।"
"जागो, उठो और तब तक मत रुको जब तक कि लक्ष्य पर न पहुंच जाओ।"

हम अपने लक्ष्य पर पहुंच चुके हैं। किन्तु अभी हमें और ऊंचे लक्ष्य पर पहुंचना है, और हमें उसके लिये काम में जुट जाना चाहिये तथा अपनी शक्ति लगा देनी चाहिये ताकि हमारे इस प्राचीन देश में जनसाधारण—आखिर संविधान जनसाधारण के ही लिये है जिससे साधारण मनुष्य अपने जीवन को आनन्द से बिता सके। इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि आप कितने मंत्री रखते हैं, कितने राज्यपाल रखते हैं, आप किस को राज्यपाल बनाते हैं। अंततोगत्वा इन बातों का कोई महत्व नहीं है। संविधान जनसाधारण, सामान्य मनुष्य के सुख, जीवन तथा स्वतंत्रता में सहायक होगा तो जीवित रह सकेगा और उनमें बाधक होगा तो स्वयं समाप्त हो जायेगा। उसी के नाम से हमने इस संविधान का निर्माण किया है, उसी के नाम से हमने स्वतंत्रता के लिये संघर्ष चलाया और उसे प्राप्त करके यहां

[श्री एच.वी. कामत]

समवेत हुए। हमें इस संविधान को उसी के नाम से क्रियान्वित करना चाहिये, हमें सर्वशक्तिमान के आशीर्वाद से तथा उसके पथ-प्रदशन में और भारत के लोगों के पूर्ण सहयोग के साथ उसी जनसाधारण के नाम से आगे बढ़ना चाहिये। हमें उस लक्ष्य पर पहुंचने का प्रयत्न करना चाहिये जिसे महात्मा गांधी ने और हमारे सब अवतारों, ऋषियों तथा मुनियों ने निश्चित किया है, मैं उस लक्ष्य को साधुनाम-राज्यम अर्थात पृथ्वी पर ईश्वर का राज्य कहूंगा, मैं उसे केवल पंचायत राज्य कहूंगा। आइये, हम जो यहां समवेत हुए हैं, संकल्प करें कि हम तब तक विश्राम नहीं करेंगे जब तक हम उस लक्ष्य को प्राप्त न कर लें जो गत साठ वर्ष या अधिक से समस्त राष्ट्र के सामने रहा है, और मुझे आशा है कि वही लक्ष्य भावी कठिन दिनों में भी हमें प्रेरणा देता रहेगा। जय हिन्द।

मौलाना हसरत मोहानी (युक्त प्रान्तः मुस्लिम): श्रीमान, क्या मैं जान सकता हूं कि क्या यह किसी प्रकार संभव है कि विभिन्न माननीय सदस्यों के भाषणों में उठाई गई कोई बात अब स्वीकृत होकर संविधान में रखी जा सके? यदि यह संभव नहीं है तो यह सब चीज 'आडम्बर' है और मुझे इस व्यापक वाद-विवाद से कोई लाभ दिखाई नहीं देता।

***अध्यक्षः** मैं मौलाना को बता देना चाहता हूं कि नियमों के अनुसार इस समय किसी संशोधन की कोई गुंजायश नहीं है। मैं अन्त में प्रस्ताव पर मत ले लूंगा।

***श्री मोहनलाल गौतम** (युक्त प्रान्तः जनरल): क्या मैं जान सकता हूं कि मौलाना इस 'आडम्बर' में भागी हैं या नहीं?

***मौलाना हसरत मोहानीः** मैं नहीं हूं। मैंने इस अवसर पर कोई संशोधन नहीं भेजा है। मैं तो सारी चीज का ही विरोध करूंगा।

***अध्यक्षः** मैं समझा था कि आप नहीं बोलेंगे।

***डॉ. पी.एस. देशमुख** (मध्य प्रदेश तथा बरारः जनरल): क्या मैं माननीय सदस्य द्वारा प्रयुक्त शब्द की ओर आपका ध्यान आकृष्ट करके आपसे प्रार्थना कर सकता हूं कि आप उन्हें उस शब्द को वापस लेने के लिये कहें।

***अध्यक्षः** उन्होंने कहा है कि वे कोई संशोधन पेश नहीं कर रहे हैं। क्या कुछ और भी कहा था?

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रासः जनरल): उन्होंने 'आडम्बर' शब्द का प्रयोग किया था वह आपत्तिजनक है।

***अध्यक्षः** मौलाना, वह शब्द आपत्तिजनक है। सदस्यों को इस पर आपत्ति है। यह आडम्बर थोड़े ही है।

***मौलाना हसरत मोहानी:** बहुत अच्छा, मैं उस शब्द को वापिस लेता हूं।

***सेठ दामोदर स्वरूप** (युक्त प्रान्त: जनरल): आदरणीय सभापति जी, ड्राफ्ट कांस्टीट्यूशन का दूसरा वाचन खत्म हो चुका है। और यह तीसरा वाचन चल रहा है, जो दो चार दिन के अन्दर खत्म हो जायेगा। इसके बाद 26 जनवरी के ऐतिहासिक दिन तक इस कांस्टीट्शन का उद्घाटन मुलतवी रहेगा। यह जो कुछ हो चुका है ठीक ही हुआ है और उसके लिये आनरेबिल डॉक्टर अम्बेडकर और ड्राफ्टिंग कमेटी के उनके दूसरे साथी सारे हाउस के बधाई के पात्र हैं, क्योंकि उन्होंने दिन रात एक करके कठिन परिश्रम और चतुराई के साथ इस विधान को खत्म किया है।

सभापति जी, इस हाउस के एक सदस्य की हैसियत से मुझे भी इस विधान के समाप्त हो जाने पर सन्तोष और खुशी होनी चाहिये। लेकिन आप मुझे यह कहने की इजाजत दें कि आज जब मैं इस विधान के सम्बन्ध में इस हाउस में कुछ कह रहा हूं तो मुझे न केवल कुछ सन्तोष ही नहीं है, कुछ खुशी ही नहीं है, बल्कि सच बात तो यह है कि मुझे अन्दर से ऐसा मालूम होता है कि मेरा दिल बैठा जा रहा है और उसके अन्दर जो काम करने की शक्ति है वह छिनी जा रही है। कारण यह है कि लगभग दो वर्ष से ज्यादा गुजर चुके जबसे अंग्रेज़ी हुकूमत हमारे देश से विदा हो चुकी है, लेकिन बदकिस्मती से यहां आम जनता, यहां के जन साधारण ने आज तक भी यह महसूस नहीं किया कि शासन का परिवर्तन होने से उनकी किसी प्रकार की बेहतर या बहबूदी हो सकी है। इतना ही नहीं, वह तो कुछ ऐसा अनुभव कर रहे हैं कि शासन में परिवर्तन होने से उनकी स्थिति दिन-ब-दिन ज्यादा खराब होती जा रही है और वह यह भी नहीं समझ पा रहे हैं कि उनकी हालत की यह खराबी कहां पर जाकर रुकेगी। सच बात तो यह है कि देश के जन साधारण को तो, जिनके नाम पर यह विधान बना है और पास किया जायेगा, अपने चारों तरफ निराशा और अन्धकार ही दिखाई देता है।

सभापति जी, हमारे कुछ साथियों का ऐसा समझना था कि जन-साधारण की स्थिति में उनको कुछ तबदीली इसलिये नहीं दिखाई देती क्योंकि अभी तक विधान और कायदे कानून वही चल रहे हैं जो अंग्रेजी हुकूमत के बनाये हुए थे। वह ऐसा विश्वास करते थे कि जब हमारा स्वदेशी विधान बनकर तैयार हो जायेगा, तो यहां की जनता अवश्य ही यह महसूस करेगी कि वह उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो रही है।

लेकिन सभापति जी, मैं कुछ साफ और खरी बात कहने के लिये क्षमा मांगता हूं। इस विधान के बन जाने और लागू हो जाने के बाद भी यहां की जनता को जरा भी संतोष नहीं होगा, जरा भी खुशी नहीं होगी। क्योंकि इस विधान में, जो कि बनकर तैयार हुआ है, जो कि शीघ्र ही लागू होने जा रहा है उसमें उनके लिये क्या है? ऊपर से लेकर नीचे तक इस विधान को पढ़ जाइये तो इसमें आपको हिन्दुस्तान के गरीब, भूखे, नंगे और पीड़ित लोगों के लिये रोटी का किसी प्रकार का भी इन्तजाम नहीं है। उनकी रोजाना कठिनाइयों को हल करने के लिये यहां पर क्या प्रयत्न हुआ है? यह बात छोड़कर, उनको काम की गारन्टी भी

[सेठ दामोदर स्वरूप]

नहीं है, उनको रोजगार मिलेगा उसकी भी गारन्टी नहीं है। उन्हें परिश्रम के अनुसार मजदूरी या वेतन मिलेगा, यह तो दूर की बात है, उन्हें लिविंगवेजेज मिलेंगी, उनको जीवन निर्वाह करने के लिये मजदूरी और तनख्वाह मिल सकेगी, इसकी भी गारन्टी नहीं है।

ऐसी हालत में सभापति जी, यह विधान दुनिया के सारे विधानों से लम्बा-चौड़ा और भारी विधान हो सकता है, ज्यादा विस्तृत भी हो सकता है। यह हिन्दुस्तान के बड़े-बड़े कानूनदानों के लिये एक स्वर्ग भी हो सकता है और हिन्दुस्तान के पूंजीपतियों के लिये इसमें मैगनाकार्टा भी हो सकता है। लेकिन जहां तक हिन्दुस्तान के गरीब और करोड़ों मेहनत करने वाले भूखे नंगों की जनता का ताल्लुक है, उसके लिये इस विधान में कुछ नहीं है। उनके लिये यह भारी पोथी एक रद्दी की किताब से ज्यादा हैसियत नहीं रखता है। यह दूसरी चीज़ है कि हम इस चीज को मानें या न मानें, लेकिन यह तो हमें मानना पड़ेगा कि आम जनता की बातें यदि हम छोड़ भी दें तो भी कुछ बड़े लोगों की बात पर तो हम ध्यान देंगे ही।

अभी हमारे हिन्दुस्तान के पार्लियामेंट के जो माननीय स्पीकर साहब हैं, उनकी बात की तरफ मुझे आपका ध्यान दिलाना है। वह कहते हैं कि जो यह विधान तैयार हुआ है उसमें हिन्दुस्तान की प्रतिभा का नाम व निशान बिल्कुल नहीं है और उसके वह सर्वथा प्रतिकूल है। अगर मैं गलती नहीं करता तो इस हाउस के अन्दर ही कांग्रेस के जनरल सेक्रेटरी साहब श्री शंकर राव देव जी ने भी अपने विचार इस विधान के ऊपर प्रकट किये हैं। उन्होंने कहा है कि अगर जनमत लिया जाये तो इस विधान को अस्वीकार किया जाना निश्चित है। तो जब इस विधान के सम्बन्ध में हम आम जनता की राय को छोड़ भी दें और इतने बड़े बड़े आदरणीय लोगों की राय की ओर ही ध्यान दें, तो फिर इस विधान के सम्बन्ध में हम कैसे कहें कि जनता को इससे कुछ संतोष हो सकता है।

सभापति जी, इसका कारण स्पष्ट है। क्योंकि यह विधान जिन लोगों की ओर से बनाया गया है, वह सच्चे मानों में किसी भी हालत में आम जनता के प्रतिनिधि नहीं हैं। मैं पहले भी इस बात को कह चुका हूं कि ज्यादा से ज्यादा इस विधान के बनाने वाले हिन्दुस्तान की 14 प्रतिशत जनता का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह एक कड़वा सत्य है। हम लोग जो इस हाउस में जनता के प्रतिनिधि बन कर बैठे हैं वह भी अनेक कारणों से पार्टी की गुटबन्दी के कारण, अथवा किसी दूसरे कारण अपने उस कर्तव्य को जिसके लिये हम यहां पर जमा हुए थे, पूरा नहीं कर सके। इसका ही यह नतीजा हुआ कि आज हिन्दुस्तान की जनता को विशेष रूप से ऐसी ही निराशा होने जा रही है जैसा कि बदले हुए शासन प्रबन्ध से उन्हें हुई है। तो फिर क्या होना है, यह हमें सोचना है। इसमें शक नहीं कि यह जो विधान पास होने जा रहा है, उसको हिन्दुस्तान की जनता आदरणीय श्री शंकर राव देव के शब्दों में कभी भी नहीं स्वीकार करेगी। यह विधान स्थायी रूप से इस देश में नहीं चल सकेगा।

हमने देखा कि इसमें कुछ अच्छी बातें दी गई हैं और कुछ अच्छे उसूलों का भी इसमें वर्णन है। जैसाकि मताधिकार और संयुक्त निर्वाचन की बात है,

अस्पृश्यता को खत्म करने की बात है लेकिन जहां तक उसूल की बातों का ताल्लुक है, वहां तक तो और बात है, लेकिन इन बातों पर किस तरह से अमल दरामद होगा, यह तो तब ही मालूम होगा जब इन उसूलों को अमल में लाया जायेगा। हम देखते हैं कि इसमें मौलिक अधिकारों की फण्डामेंटल राइट्स (Fundamental Rights) की एक बहुत महत्वपूर्ण बात है। लेकिन, सभापति जी, क्या वाकई हमें इस विधान के जरिये कुछ मौलिक अधिकार मिले हैं, मैं जोरों के साथ कह सकता हूं कि मौलिक अधिकारों की देने की बात महज एक दिखावा है। वह एक हाथ से तो दिये गये हैं और दूसरे हाथ से छीन लिये गये हैं। स्पष्ट शब्दों में हमें बता दिया गया है कि यह जो मौलिक अधिकारों की गारण्टी दी गई है, यह गारण्टी नहीं लागू होगी, उन कायदे कानून पर जो आज जारी हैं, लिबेल (libel), स्लेण्डर (slander) या कंटेम्प्ट ऑफ कोर्ट के सम्बन्ध में, और सरकार को यह भी अधिकार है कि वह आगे भी दूसरे ऐसे ही कानून बना सकती है? इसके अलावा जहां संघ बनाने या राइट् ऑफ ऐसोसियेशन (Right of Association) का ताल्लुक है या लोगों के कहीं आने जाने या बसने का सम्बन्ध है वहां भी सरकार को यह अधिकार हासिल होगा कि वह जनहित के नाम पर इन अधिकारों को छीन लेने के लिये जिस तरह का कानून चाहेगी बना सकती है। तो फिर मौलिक अधिकारों को देना न देना एक प्रकार से बराबर है।

इसके बाद, सभापति जी, हमने देखा कि सम्पत्ति के सम्बन्ध में जो कानून (Law) है, वह वैसे का वैसा ही है जैसा कि सन् 1935 के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट में था। इस का परिणाम यह होगा कि सम्पत्ति का समाजीकरण या सोशलाइजेशन (socialisation) नहीं हो सकेगा और जो आर्थिक सुधार जनता के हित के लिये हो सकते हैं उनके रास्ते में बड़ी काफी कठिनाई पैदा होगी।

सभापति जी, आश्चर्य होता है, दुख भी होता है कि जब हमारे देश के प्रधान मंत्री इस विधान सम्बन्धी उद्देश्य के प्रस्ताव पर बोल रहे थे तो उन्होंने बड़े जोरदार शब्दों में कहा था कि मैं एक सोशिलिस्ट हूं। उन्होंने यह आशा भी प्रकट की थी कि यह विधान एक सोशिलिस्ट रिपब्लिक (Socialist Republic) का विधान होगा। लेकिन हमने उनकी सारी बातें सुन लीं और हमने देखा कि जब यह संशोधन हाउस के सामने आया कि रिपब्लिक के साथ सोशिलिस्ट शब्द भी जोड़ दिया जाये तो वह संशोधन अस्वीकार कर दिया गया।

सभापति जी, एक तरफ तो हम यह चाहते हैं कि आज का सामाजिक ढांचा बना रहे और उसमें किसी प्रकार की तबदीली न हो और साथ ही हम यह भी चाहते हैं कि इस मुल्क से गरीबी दूर हो, इस मुल्क से बेकारी दूर हो। यह दोनों बातें साथ साथ नहीं चल सकतीं। समझ में नहीं आता कि जब हमारे प्रधान मंत्री अमेरीका में थे, तो उन्होंने कहा था कि सोशलिज्म (Socialism) और कैपिटलिज्म (Capitalism) दोनों साथ साथ नहीं चल सकते। आश्चर्य है कि इस देश में कैसे आशा की जा सकती है कि इस स्टेटस-को (*status quo*) को कायम रखा जाये। कैपिटलिज्म भी बना रहे और इसके साथ साथ जनता की गरीबी और

[सेठ दामोदर स्वरूप]

बेकारी भी दूर हो जाये। यह दोनों चीजें बिल्कुल असंगत हैं। इस लिये ऐसा अनुभव होता है कि शायद हिन्दुस्तान की नंगी, भूखी और पीड़ित जनता इसी प्रकार मुसीबत में फंसी रहेगी जैसी आज फंसी हुई है। इसके साथ हम कुछ और बातों की तरफ देखते हैं तो भी किसी परिणाम पर नहीं पहुंचते हैं। आज हमारे देश में कोपरेटिव कामनवेल्थ (Co-operative Commonwealth) की बात बहुत जोरों के साथ की जाती है: लेकिन क्या होता है? डारेक्टिव प्रिन्सिपल (Directive Principle) में स्पष्ट शब्दों में ऐसी कोई हिदायत नहीं की गई है कि सरकारें इस प्रकार की व्यवस्था करेंगी, तो गोल मोल शब्दों में कुछ हिदायतें दे देना और बात है और खुला यह आदेश दे देना कि इस प्रकार की व्यवस्था लागू की जानी चाहिये, दूसरी बात है। फिर कांग्रेस के सभापति इस बात की आशा दिलाते हैं कि पांच वर्ष में इस देश में वर्गहीन समाज कायम हो जायेगा। पर मेरे जैसे साधारण आदमी की बुद्धि में यह बात नहीं आती कि एक तरफ सोशलिस्ट सिद्धान्त से हम को चिढ़ है, और हम स्टेटस-को (*status quo*) कायम रखते हैं, और दूसरी तरफ हम यह चाहें कि शोषक वर्ग को बनाये रखते हुए हमारे देश में वर्ग-हीन समाज कायम हो जाये, तो यह दोनों बातें, जो परस्पर विरोधी हैं, कैसे हो सकती हैं? इसके अलावा और भी कई छोटी-छोटी बातें, जोकि की जा सकती थीं, वह नहीं की गई।

एग्जीक्यूटिव (Executive) और ज्यूडिशियरी (Judiciary) के अलग होने की मांग बहुत पुरानी मांग है, शायद इतनी पुरानी मांग है जितनी पुरानी कि राष्ट्रीय महासभा कांग्रेस मानी जाती है। लेकिन इस विधान में कोई भी ऐसी निश्चित योजना (ऐडीक्वेट प्रावीजन) (adequate provision) नहीं है कि जिसके द्वारा जल्द से जल्द एग्जीक्यूटिव और ज्यूडिशियरी का सम्बन्ध एक-दूसरे से बिल्कुल अलग हो जायेगा।

रियासतों में देखिये कि अभी तक जागीरदारी प्रथा खत्म करने के सम्बन्ध में कोई भी निर्णय नहीं किया गया है। इसका नतीजा यह होगा कि रियासतों की लाखों करोड़ों किसान जनता गुलाम बनी रहेगी। वहां की जागीरदारों की। इसके अलावा खेतिहर मजदूर महाजनों के गुलाम बने रहेंगे। इसके साथ ही साथ हम यह देखते हैं कि इस विधान में बहुत-सी बातें ऐसी पाई जाती हैं जो कि सन् 1935 के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट से भी कहीं ज्यादा पिछड़ी हुई और प्रतिक्रियावादी हैं, कहीं ज्यादा रिएक्शनरी (reactionary) हैं। पहले तो इस विधान में यह बताया गया था कि गवर्नरों का सीधा वोटरों से चुनाव होगा। उसके बाद दूसरा प्रस्ताव यह आया था कि एक पैनल (panel) द्वारा गवर्नरों की नियुक्ति होगी। परन्तु अब गवर्नरों को चुनने का अधिकार सभापति जी को दे दिया गया है और यह भी अधिकार दे दिया गया है कि उनकी नियुक्ति की मुद्दत भी वही निर्धारित करेंगे। यह ठीक है कि सभापति जी जहां तक भी होगा अपने अधिकार का ठीक इस्तेमाल करेंगे, लेकिन इससे प्रान्त की सरकार और गवर्नर के बीच

में रस्साकशी हो सकती है। हो सकता है कि प्रान्त की सरकार की विचारधारा कुछ हो और केन्द्रीय सरकार की विचारधारा कुछ हो, और उस विचारधारा के संघर्ष की वजह से प्रान्तीय सरकार और गवर्नर में संघर्ष होने लगे। इसके अलावा गवर्नर की डिस्क्रीशनरी पावर्स (discretionary powers) तो सन् 35 के ऐक्ट से भी ज्यादा रिएक्शनरी (reactionary) हैं। सन् 35 के एक्ट में गवर्नर को इंडीवीजुअल जजमेन्ट (Individual judgment) की पावर दी गई थी, लेकिन उसके लिये जरूरी होता था कि वह मंत्रिमंडल से राय ले। लेकिन अब डिस्क्रीशनरी पावर में तो गवर्नर को मंत्रिमंडल से सलाह लेने की भी जरूरत नहीं है, और यह भी उसके अपने अधिकार की बात है कि किस विषय को वह डिस्क्रीशनरी माने और किस विषय को वह डिस्क्रीशनरी न माने। इस प्रकार हम देखते हैं कि गवर्नरों के सम्बन्ध में और उनके अधिकारों के सम्बन्ध में भी आगे बढ़ने के बजाय हम पीछे ही हटे हैं।

इसके अलावा संकटकालीन अधिकारों के नाम पर, इमरजेन्सी पावरस (emergency powers) के नाम पर, सभापति जी को जरूरत से ज्यादा अख्तियारात दे दिये गये हैं और सेन्टर (केन्द्र) को भी प्रान्तों के मामलों में हस्तक्षेप करने के जरूरत से ज्यादा अधिकार दे दिये गये हैं। यों तो कहने के लिये तो हमारे विधान का ढांचा फैडरल (federal) या संघी है परन्तु वास्तव में देखें तो जहां तक एडमिनिस्ट्रेटिव स्फियर (administrative sphere) (शासन-क्षेत्र) का ताल्लुक है, वह बिल्कुल यूनिटरी (unitary) एकराज्य-सा बन गया है। हम यह समझते हैं कि कुछ हद तक केन्द्रीकरण होना जरूरी है, लेकिन जरूरत से ज्यादा केन्द्रीकरण के माने यह हैं कि मुल्क में भ्रष्टाचार बढ़े। उम्र भर गांधी जी हमको डिसेंट्रलाइजेशन (विकेन्द्रीकरण) का सबक सिखाते रहे। आश्चर्य है कि उनके विदा होने के बाद हम उस सबक को इतनी जल्दी भूल गये और आज शान्ति रक्षा के नाम पर सभापति जी को और केन्द्रीय सरकार को हम जरूरत से ज्यादा अधिकार दे रहे हैं।

सभापति जी, यों तो आजकल के राज्यों का ढांचा दो खम्भा होता है। कुछ अधिकार प्रान्तों को होते हैं और शेष अधिकार केन्द्र को होते हैं। वह खुद ही जरूरत से ज्यादा केन्द्रित (सेंट्रलाइज्ड) है। अगर हम चाहते हैं कि भ्रष्टाचार बन्द हो, ब्राइबरी (bribery) करप्शन (corruption) और निपाटिज्म (nepotism) का अन्त हो तो इसके लिये आज का दो खम्भा राज का ढांचा उपयुक्त नहीं मालूम देता है। इसके लिये तो जरूरी यही था कि ढांचा चौ खम्भा हो। जैसा कि मैंने पहले एक दफा सुझाव दिया था, कि हमारे गांवों की अलग प्रजातंत्र (रिपब्लिबक्स) होतीं, शहरों की प्रजातंत्र (रिपब्लिक्स) अलग होतीं, और सूबों की प्रजातंत्र अलग होतीं और उनका केन्द्रीय रिपब्लिक के रूप में संघ बनता तो यह सच्चे मानों में प्रजातांत्रिक संघ का ढांचा बनता। लेकिन जैसा मैंने अभी कहा आज संघ के नाम पर हमने एक युनिटरी एक ही राज्य का जैसा विधान बना कर रख दिया है। इसका लाजिमी नतीजा यही होगा कि जरूरत से ज्यादा केन्द्रीकरण (centralisation) होगा और हमारी सरकार जो कि जनता की सरकार होनी चाहिये वह एक फासिस्ट जैसी सरकार बन जायेगी। तो इस दृष्टिकोण से देखने पर भी सभापति जी हम

[सेठ दामोदर स्वरूप]

इसी नतीजे पर पहुंचते हैं कि यह जो विधान हमारे देश में बन कर तैयार हुआ है उससे न हमारी जनता की भलाई होती है और न उन ऊंचे सिद्धान्तों की रक्षा होती है जिनके आधार के नाम पर हमने इस विधान को बनाया है। यही कारण जान पड़ता है कि हिन्दुस्तान की सोशलिस्ट पार्टी ने यह घोषणा की है कि जब कभी ऐसा अवसर हुआ कि उनके हाथ में सत्ता आई तो पहला काम वह यह करेंगे कि जनमत के अधिकार पर एक-दूसरी विधान परिषद् बनाई जायेगी और वह विधान परिषद् या तो इस सारे विधान को समूल बदल देगी या इसमें आवश्यक संशोधन करेगी। इसलिये सभापति जी मैं और ज्यादा समय न लेकर यही कहूंगा कि जहां तक जनता के हित का ताल्लुक है और जहां तक विधान संबंधी ऊंचे उसूलों का ताल्लुक है, उनको देखते हुए विधान इस काबिल नहीं है कि इसको स्वीकार किया जाये। इस विधान को तो हमें यही चाहिये कि हम अस्वीकार कर दें। लेकिन सभापति जी, हम ऐसा करें या न करें मैं आपसे यही निवेदन करना चाहूंगा, और मैं अपने आदरणीय श्री शंकर राव जी देव की इस बात में पूरा विश्वास करता हूं कि चाहे हम इस विधान को स्वीकार कर भी लें लेकिन देश की जनता कभी भी इस विधान को स्वीकार नहीं करेगी। उनके लिये इस विधान का महत्व और दूसरी साधारण कानून की किताबों से ज्यादा नहीं होगा। जनता की जो आशायें इस विधान से थीं वह इसी तरह अपूर्ण बनी रहेंगी जैसी अंग्रेज़ी राज्य के परिवर्तन से उनकी आशायें पूरी नहीं हो सकीं। इस लिये अगर हम चाहते हैं कि हम पर जनता का विश्वास कायम रहे तो अभी भी यह मौका है कि हम उसे बनाये रखें। परन्तु अगर हम इस कार्य में सफल नहीं होते तो मेरा विश्वास है, सभापति जी, कि हिन्दुस्तान की आम जनता आज भी और आने वाली नसलें भी हमें किसी अच्छे सम्मानपूर्ण नाम से याद नहीं करेंगी।

*__श्री टी. प्रकाशम__ (मद्रास: जनरल) अध्यक्ष महोदय, यह संविधान वह नहीं है जिसकी मैं अपने देश के लोगों के लिये आशा करता था, जिसकी आशा मैं तथा अन्य बहुत से लोग करते थे जो इस देश की स्वतंत्रता को प्राप्त करने के लिये प्रयत्न करते रहे हैं, जिस संविधान की योजना महात्मा गांधी ने बनाई थी, केवल योजना ही नहीं बनाई थी वरन्, क्रियान्वित भी करने का प्रयत्न किया था। पंचायत राज्य की योजना बनाई गई थी और राष्ट्र के समक्ष पेश की गयी थी। उनके आने से पहले और देश के समक्ष अपना कार्यक्रम रखने से पहले कोई स्वप्न में भी नहीं सोच सकता था कि जनता, जो सब प्रकार विभक्त थी, एक नेतृत्व में आयेगी, एक झंडे के नीचे आकर उनके तथा कांग्रेस के आदेशों पर चलेगी। वे ही एक व्यक्ति थे जिन्हें, संविधान बनाना चाहिये था, वे ही इस देश के लोगों के लिये संविधान बना सकते थे जिससे सबको, करोड़ों को विश्राम मिल सकता था। उनकी योजना थी कि करोड़ों को शिक्षित किया जाये और उनके द्वारा आजादी के लिये संघर्ष कराया जाये, यह योजना उसी समय से थी जब वे दक्षिण अफ्रीका से लौट कर इस देश में आये थे। महात्मा गांधी के विषय में आप मेरे से या देश में किसी से भी अधिक जानते हैं, और श्रीमान, जब संविधान का मसौदा बन रहा था तब आपने कृपा करके एक रचनात्मक कार्यकर्त्ता के, जो

अधिवक्ता था, शिक्षित व्यक्ति था और जिसने काफी समय से ग्रामों में अपना जीवन बिताया था पत्र का उत्तर दिया था। उस पत्र में उसने महात्मा गांधी की इस पंचायत व्यवस्था का सुझाव दिया था और आपने उसे सविवरण उत्तर दिया और आप उससे प्रभावित हुए क्योंकि आप महात्मा गांधी के अग्रतम अनुयाइयों में से हैं और उस पत्र की एक प्रतिलिपि मुझे दी थी और उस पत्र को आपने सांविधानिक परामर्शदाता श्री बी.एन. राव को भेज दिया था। जब हम चर्चा कर रहे थे तब अन्यत्र मैंने उस प्रश्न को उठाया था और सब वहां प्रभावित हुए थे, किन्तु मैंने स्वयं पंचायत संविधान को, उसकी रूप रेखा को रखना कठिन समझा, क्योंकि संविधान में काफी प्रगति हो चुकी थी। अत: हमने उस विचार को छोड़ दिया, और नेताओं ने तब यह सुझाव दिया कि संविधान में निदेशक सिद्धान्त रख दिये जायेंगे। अब वह संविधान हमारे सामने है। अत: मैं जो संविधान चाहता था वह वैसा संविधान था। केवल उसी संविधान से करोड़ों को भोजन और कपड़ा और जीवन की सब आवश्यकतायें प्राप्त हो सकती हैं। ब्रिटिश राज्य में करोड़ों की उपेक्षा की गई थी और अंग्रेजों के जाने के बाद भी उनकी उपेक्षा हमारे देश में की गई और हमने भी उनकी उपेक्षा कर दी है और हम इस संविधान को बना रहे हैं।

संविधान एक महान लेख्य है और इसे बनाने वाले डॉ. अम्बेडकर एक महान वकील हैं, एक बहुत योग्य व्यक्ति हैं। यहां उन्होंने जो काम किया है उससे उन्होंने यह सिद्ध कर दिया है कि वे ग्रेट ब्रिटेन में राजा के परामर्शदाता बनने के योग्य हैं, शायद वूलसेक पर ही बैठने के योग्य हैं, किन्तु यह संविधान ऐसा नहीं है कि जो इस देश के लोग चाहते थे। जब महात्मा गांधी ने इस देश की बागडोर को कांग्रेस के नाम से संभाला था तब उन्होंने देख लिया था कि इस देश की और इसके करोड़ों लोगों की सहायता कैसे की जा सकती है। अतएव उन्होंने विनिश्चय किया था कि देश को भाषा के आधार पर विभक्त कर देना चाहिये जिससे कि प्रत्येक क्षेत्र के लोग अपना विकास स्वयं कर सकें। उन्होंने केवल प्रचार के निमित्त ही यह नियम नहीं बनाया था वरन् उन्होंने उस पर अमल किया, देश को 21 भाषा भाषी क्षेत्रों में विभाजित कर दिया और उन्होंने लोगों से उसी संविधान के अंतर्गत काम करवाया। वास्तव में उनके दिवंगत होने के पश्चात् तथा अंग्रेजों के यहां से चले जाने के पश्चात्, हमें उस आधार को छोड़ नहीं देना चाहिये था जिस पर कि उन्होंने देश को शिक्षित किया था, केवल शिक्षित ही नहीं किया था प्रत्युत प्रत्येक क्षेत्र के लोगों को काम चलाने के योग्य बना दिया था। वह कांग्रेस कार्य क्या था जो उनके निदेश से और कांग्रेस के निदेश से और आपके नेतृत्व में तथा अन्य लोगों के नेतृत्व में किया गया था? वे सब बातें अब कहीं नहीं हैं जो 26 वर्ष तक की जाती रही थीं कि अपना वस्त्र कैसे बनाया जाये, अपना भोजन कैसे पकाया जाये तथा रचनात्मक कार्यक्रम की अन्य मदों को कैसे पूरा किया जाये। अतएव मैं यहां दुखपूर्वक विचार करता रहा हूं कि हम उस मार्ग से हट रहे हैं। मानो उसकी आत्मा से दूर भाग रहे हैं।

संविधान को बहुत ध्यान से बनाया गया है। मैं बहुत समय से, लगभग 40 या 45 वर्ष तक संविधानिक विधि का विद्यार्थी रहा हूं। मैंने इस संसार के विविध देशों के संविधानों के सिद्धान्तों को समझा है। यहां वैधानिक विशेषज्ञ तथा मसौदा समिति के सभापति हमें प्राय: अमरीकी संविधान का हवाला देते थे। अमरीकी

[श्री टी. प्रकाशम]

संविधान में क्या है? हम उसके सार को समझ सकते हैं—किस प्रकार 13 विविध उपनिवेश या एकक एकत्रित हुए, और वे ब्रिटिश के विरुद्ध युद्ध जारी रखने के लिये दृढ़ प्रतिज्ञ थे और उन्होंने युद्ध चलाया और युद्ध समाप्त करने के पश्चात् उन्होंने संविधान बनाया। जब ऐसी बात थी तब मसौदा समिति के सभापति के तथा वैधानिक विशेषज्ञ के—जो बहुत योग्य व्यक्ति हैं और जो विधि-वत्ति में सर्वोच्च थे—दिमाग में क्या भय था? उनका दिमाग वहां नहीं था क्योंकि वे उन में नहीं थे। अतः यह संविधान इंग्लिश संविधान के आधार पर आरम्भ हुआ। 1935 का अधिनियम इस संविधान का आधार बन गया। हमने मानों इसमें कई उपबंध ज्यों के त्यों रख दिये। वे अत्यन्त असाधारण प्रकार के हैं, वे नये आविष्कार नहीं हैं जो सर्व प्रथम ग्रेट ब्रिटेन ने किये हों। हम इतनी जल्दी यह कहने के लिए क्यों तैयार हो गये कि हम 1935 के ग्रेट ब्रिटेन के इस संविधान को स्वीकार करते हैं।

अतएव, श्रीमान, मैं इस सदन के माननीय सदस्यों से निवेदन कर रहा हूं जो सब ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने ने हमारे देश की स्वतंत्रता को प्राप्त करने के लिये महान त्याग किये हैं, कि गांधी जी की योजना में जो बातें थीं वे उचित थीं, समस्त सदन मानों एक आवाज से उठ खड़ा हुआ था, और उन्होंने पंचायत-राज-व्यवस्था की मांग की थी। किन्तु अब समय नहीं रह गया था अतः उसे संविधान में नहीं रखा जा सका। किन्तु सब उसके पक्ष में थे, और गत दो दिन से भी सब अपने भाषणों में उसी का निर्देश कर रहे हैं, जैसा कि वे पहले भी करते थे। अतएव मैं जिस संविधान की आशा कर रहा था और मैं इस देश के लिये जिस संगठन की आशा कर रहा था वह भाषा के आधार पर विभाजन था जो गांधी जी ने तैयार किया था, जो केवल सिद्धान्त के रूप में या ऐसे ही स्वीकार करने के लिए नहीं तैयार किया गया था, बल्कि 26 वर्ष तक उस पर अमल किया गया था, अब तो 30 वर्ष हो गये हैं। अब भी वही व्यवस्था चालू है। हमने उसे क्यों छोड़ दिया है, और इसे क्यों अपना लिया है?

मैं इस सम्बन्ध में एक शब्द कहना चाहता हूं, श्रीमान। मेरे जैसे व्यक्ति, डॉ. पट्टाभि सीतारमैया, प्रो. रंगा और अन्य लोग जो हमारे प्रान्त के हैं और जो आंध्र प्रान्त को पृथक करने के लिये आन्दोलन करते रहे हैं, और उसके लिये 36 वर्षों से लड़ते रहे हैं, अभी तक सफल नहीं हुए हैं। अंततोगत्वा कांग्रेस कार्यसमिति ने कृपा करके आंध्र के पार्थक्य को स्वीकार कर लिया है। मैं कार्यसमिति को, डॉ. पट्टाभि सीतारमैया को, माननीय पं. जवाहरलाल नेहरू को तथा माननीय सरदार वल्लभभाई पटेल एवं कार्यसमिति के अन्य सदस्यों को धन्यवाद देता हूं कि उन्होंने इसे स्वीकार कर लिया है। उन्होंने इसे स्वीकार कर लिया है कि यह काम तत्काल आरम्भ कर दिया जाये और सब काम पूरा किया जाये। मद्रास शहर के विषय में एक विवाद था जिस का हल नहीं हो सकता था। आपने, श्रीमान, धर आयोग को नियुक्त किया था और उस आयोग ने समूचे प्रश्न पर विचार करके तथा देश भर का भ्रमण करके अपने प्रतिवेदन में कुछ निश्चय किये हैं। इन सिफारिशों के आधार पर ही हमने आंध्र प्रान्त की मांग की, और श्रीमान, मद्रास शहर पर दावा नहीं किया, यद्यपि उसे पृथक करने की और विभाजन की

तथा उसे पृथक प्रान्त बनाने की मांग थी। इस प्रश्न पर कार्यसमिति कोई विनिश्चय नहीं कर सकी थी। किन्तु उन्होंने कृपा करके उसे ऐसे रूप में रखा था कि प्रश्न पर विचार किया जा सकता था। और एक सीमा आयोग भी नियुक्त किया जाना है। अतः मैं सरकार को और उन सबको धन्यवाद देता हूं जिन्होंने यह कुछ किया है।

मैं यह भी अनुभव करता हूं कि आंध्र के विषय में जो कुछ किया गया है वही दूसरों के विषय में भी होना चाहिये। जो कि भाषावार प्रांत बनने के लिये आंदोलन कर रहे हैं इसमें अधिक समय नहीं लगता। किन्तु नेताओं के दिमाग में कुछ आशंका प्रतीत होती है जिससे कि वे भाषा के आधार पर पार्थक्य पर विचार नहीं कर सकते। यह असंभव बात नहीं है। उसी काम से और सब लोगों की उसी संयुक्त भावना से, उसी विभाजन से यह स्वतंत्रता प्राप्त हुई है, और देश एक हुआ है। हम इसे टालना क्यों चाहते हैं, मेरी समझ में नहीं आता। किन्तु दोनों नेता इस समय, भाषा के आधार पर विभाजन के प्रबल विरोधी थे, और इस सदन में या बाहर कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं है जो इन नेताओं के विचारों के विरुद्ध बोल सके, विशेषतः जब हम देखते हैं कि ये दो नेता इस देश का प्रशासन संभालने के पश्चात् अत्यन्त कठिन परिस्थितियों में, कैसे काम करते रहे हैं, उदाहरण के लिये सरदार वल्लभभाई पटेल को लीजिये जिन्होंने सब राज्यों को संघ में संयुक्त कर दिया है, मानो समस्त भारत का एक संयुक्त संघ बना दिया है, संसार के इतिहास में ऐसा केवल एक ही व्यक्ति हुआ है, ऐसा ही महान व्यक्ति हुआ है वह है बिस्मार्क। किन्तु वल्लभभाई पटेल ने बिस्मार्क को मात कर दिया, फीका कर दिया, उससे भी वे आगे बढ़ गये। मुझे चाटुकारी की और उचित समय पर अच्छे शब्द कहने की बान नहीं है। किन्तु आप जानते हैं कि ब्रिटिश पत्रों में भी, जो सबसे अधिक रूढ़िवादी पत्रों में से होते हैं, सरदार वल्लभभाई पटेल को बिस्मार्क से बड़ा बताया गया है। अतः हमें सबको सरदार वल्लभभाई पटेल के काम पर महान गर्व है, और वे जितना परिश्रम करते रहे हैं, तथा कठिनाइयों का सामना करते हैं, केवल देश के संविधान के विषय में बाहर से तथा अंदर से ही नहीं, वरन्, शारीरिक कठिनाइयां भी झेलते रहे हैं, उन सब पर भी हमें गर्व है। हम जानते हैं कि वे देश के विषय में अन्य कठिनाइयों को झेलते रहे हैं वैसे ही वे शारीरिक कठिनाइयों को भी झेलते रहे हैं।

फिर, श्रीमान, माननीय श्री जवाहर लाल नेहरू को लीजिये, वे अभी अमरीका से लौटे हैं। उन्होंने क्या किया है अब? वहां अपने भ्रमण में वे शांति का संदेश ले गये हमारे ग्रामों में, या हमारे जिलों में, या हमारे प्रान्तों में नहीं, अपितु समस्त देश में और समूचे अमरीका में और मानो सब अन्य राष्ट्रों में ले गये। और वे मानो एक उत्तर वापिस लाये, कि वे सब आज शान्ति के पक्ष में हैं और युद्ध के पक्ष में नहीं हैं। रुस के प्रतिनिधि ने भी यही बात संयुक्त राष्ट्र संघ के समक्ष अपने हाल ही के प्रस्तावों में प्रदर्शित की है। हां, उस पर अन्य लोगों ने बहुत अविश्वास किया, उसके शब्दों पर विश्वास नहीं किया गया। किन्तु मुझे विश्वास है कि उसने शांति की मांग सच्चे दिल से की थी, और जब वह मांग स्टालिन के देश से आती है तो उसे स्वीकार करके सफल बनाना चाहिये।

[श्री टी. प्रकाशम]

और इस प्रकार, भारत महात्मा गांधी के सिद्धान्त पर चलता है और भारत के यह प्रधानमंत्री हैं—जिनसे मैं कई कई बार मेरी इच्छानुसार काम न करने पर लड़ता रहता हूं—पर इन प्रधान मंत्री ने उन्हें यह शांति का संदेश ले जाकर दिया, और मानो उसका उत्तर लाये, मेरा मतलब है कि समूचे विश्व को शांति का संदेश दिया, और उन्होंने सिद्ध कर दिया कि वे महात्मा गांधी के शिष्य हैं जहां तक कि अहिंसा, सत्य तथा शांति का संबंध है।

इसलिये, जब ये दोनों नेता यहां प्रयत्न कर रहे हैं, तो लोग उनका विरोध नहीं कर सके और उन्हें यह नहीं समझा सके कि भाषा के आधार पर देश के विभाजन से एकता होगी, फूट नहीं होगी। इससे गड़बड़ नहीं होगी। दूसरी ओर इससे शक्ति प्राप्त होगी। और उन तत्वों का विरोध करने की ताकत मिलेगी जो हमारी सरकार के विरुद्ध या इस देश में किसी सरकार के विरुद्ध काम कर रहे हैं। उदाहरण के लिये अमरीकी राज्यों को लीजिये। तेरह राज्य संयुक्त हुए और युद्ध चलाया, और युद्ध के पश्चात् उन्होंने अपना संविधान बनाया, किन्तु उस प्रकार नहीं जिस प्रकार हम बना रहे हैं श्रीमान।

मेरी बहुत प्रबल भावना है। कि हमने ब्रिटेन में भारत के सेक्रेटरी ऑफ स्टेट तथा केबिनेट के निदेश के अंतर्गत संविधान सभा का निर्माण करके अपने संविधान की रचना का काम चलाया है 1947 के भारत स्वतंत्रता अधिनियम को देखिये। उसी अधिनियम के अंतर्गत हम यह सब कुछ करते हैं। हां, उन्हें तो वह अधिनियम पारित करना ही पड़ता। मुझे उस पर आपत्ति नहीं है, क्योंकि वे अपनी संसद के द्वारा सार्वजनिक रूप से यह घोषणा करना चाहते थे कि उन्होंने भारत से अपने संबंध तोड़ लिये हैं, कि वे किसी बात के लिये उत्तरदायी नहीं होंगे। उन धाराओं में, जो अधिनियम के उत्तर भाग में थीं–(अधिनियम में 20 धारायें हैं)—उन्होंने घोषणा कर दी "हमने भारत भारतीयों को सौंप दिया है और इस तारीख से हम किसी बात के लिये उत्तरदायी नहीं होंगे जो भारत सरकार द्वारा, भारतीयों द्वारा, जो हमारा स्थान ले रहे हैं, की जाये। उन्हें यह उत्तरदायित्व भी लेने होंगे।" यदि ऐसी बात थी तो उन्हें हमें कहना चाहिये था कि हम अपनी खुद की संविधान सभा बनाकर अपना संविधान बनायें। किन्तु उसके स्थान पर मानो अंतिम क्षण तक उसे संसद के अधीन रखना चाहते थे और भारत स्वतंत्रता अधिनियम के नाम से चलाना चाहते थे। उन्होंने क्या किया? पहले उन्होंने गवर्नर जनरल बना दिया। गवर्नर अपने स्थान को तब छोड़ेगा जब यहां राष्ट्रपति नियुक्त हो जायेगा, और जब हम इस संविधान को पारित कर देंगे। किन्तु वह राजा जार्ज का गवर्नर जनरल है हमारा नियुक्त किया हुआ गवर्नर जनरल नहीं है। उसे वहां ब्रिटेन के हितों का ध्यान रखने के लिए रखा गया है। हां, मैं नहीं...

एक माननीय सदस्यः ऐसे कोई बात नहीं है।

***श्री टी. प्रकाशमः** यह कहना व्यर्थ है कि "ऐसी कोई बात नहीं है।" मैं संविधान की बात नहीं कर रहा हूं यहां क्या किया गया है? अंग्रेजों के जाने से पहले गवर्नर जनरल जो कुछ करता था वही काम अब भी गवर्नर जनरल करता रहा है? अतः मैं कहता हूं, श्रीमान, मैं इस संविधान की कमजोरी बता

रहा हूं जो कि भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम के फलस्वरूप ब्रिटेन के तत्वाधान में बनाया जा रहा है। मैं बता रहा हूं कि भारत स्वतंत्रता अधिनियम के पारित होने के दिन तक ब्रिटेन इस देश पर अपना अधिकार रखना चाहता था। उस अधिनियम की धारा 17 में वे कहते हैं कि अंग्रेज लोग जब सरकार चला रहे थे उस समय की गई किसी बात का दायित्व भारत-सचिव पर नहीं होगा। वहां यह भी लिखा है कि उनके पदासीन रहने पर उन्होंने जो कुछ किया है उसके लिये ब्रिटिश एक्सचेकर का दायित्व नहीं होगा। मैंने इस बात पर दो-तीन वर्ष विचार किया है मैं यह बताने के लिये आतुर हूं कि ब्रिटेन ने इस देश के लोगों के साथ सबसे बड़ा अन्याय किया था जब कि उसने भारत शासन अधिनियम 1935 की धारा 315 के अंतर्गत कुछ ऋण लिये थे और ये ऋण लेने के लिये किसी धातविक् आधार के बिना ही नोट जारी कर दिये थे। युद्ध आरम्भ होने से पूर्व कुल चालू नोट सात अरब 14 करोड़ रुपये के लगभग थे: युद्ध समाप्त होने के समय तक 1948 में कुल राशि 12 अरब 14 करोड़ रुपये की थी। मैं कहता हूं, मैं कहता रहा हूं और मैंने उस दिन संसद में अपनी आयव्ययक विषयक वक्तृता में कहा था कि इन नोटों का, जो युद्ध काल में किसी धातविक आधार के बिना जारी किये गये थे, उस कागज के बराबर भी मूल्य नहीं है जिस पर कि वे छापे गये थे, और इस देश के लोगों का उनके विषय में दायित्व नहीं होना चाहिये जिन्होंने ब्रिटिश सरकार को नकद राशि देकर इन नोटों को स्वीकार किया था। मेरा यही कहना है और मैं यही बात उठाना चाहता था। मैं आपको कोई नई विस्मयकारी बात नहीं कह रहा हूं। डॉ. अम्बेडकर मसौदा-समिति के सदस्य हैं, और इस संविधान निर्माता निकाय के वैधानिक परामर्शदाता हैं—मैंने दो वर्ष पहले उन्हें एक संकल्प की सूचना भेजी थी। उस खरीते में मैंने इस सारी बात पर प्रकाश डाला था और उनसे कहा था कि उस प्रस्ताव को सदन के समक्ष रखवायें। मुझे उस की कोई सूचना नहीं मिली और मैं कुछ समय तक उपस्थित नहीं हो सका। बाद में श्री सत्यनारायण सिंह ने एक खरीता भेजा कि जो वहां बैठे हैं उन्हें यहां नहीं आना चाहिये। मैं यहां एक विशेष मांग पर आया हुआ हूं जो पंडित जवाहर लाल नेहरू से की गई थी। मैंने 14 अगस्त 1949 को जिस संकल्प की सूचना दी थी वह यह है:—

> "मैं सूचना देना चाहता हूं कि संविधान सभा का यह सम्पूर्ण-प्रभुत्व-संपन्न निकाय संघ संविधान के विचार तथा रचना पर आगे बढ़े, उससे पूर्व में निम्न संकल्प, जो लोकहित के महत्वपूर्ण मामले पर है, विचारार्थ तथा विनिश्चयार्थ प्रस्तावित करना चाहता हूं।"

संकल्प यह है:—

> "यह सभा एतद द्वारा घोषणा करती है कि ग्रेट ब्रिटेन ने, अपनी चलार्थ विधि द्वारा तथा चलार्थ नीति द्वारा और उसके परिणामस्वरूप तथाकथित लोकऋण द्वारा तथा धातविक प्रतिभूति के बिना कागजी चलार्थ के प्रसार एवं चलन से पैदा हुए करोड़ों रुपये के दायित्व द्वारा, भारत के लोगों पर जो भारी बोझ डाल दिया है वह अवैध है और भारत के लोगों ने अपनी राजनैतिक और आर्थिक स्वतंत्रता के लिये जो लम्बा संघर्ष किया है उसे देखते हुए यह सब

[श्री टी. प्रकाशम]

चलार्थ नोट, जो ऐसे जारी किये गये थे, भारत के लोगों के लिये व्यर्थ तथा मूल्यहीन हैं।"

खैर, श्रीमान, जब यह सूचना दे दी गई थी, तो क्या मसौदा समिति के प्रधान महोदय, या वैधानिक परामर्शदाता, या कोई भी कह सकता है कि यह मामला उनके सामने नहीं था? मैंने उनका ध्यान इस ओर आकृष्ट किया था: मैंने यह भी कहा था कि संविधान सभा के संविधान अधिनियम पर विचार करने से पूर्व इस पर विचार करना चाहिये। अत: मेरा निवेदन है कि इस संविधान की रचना में हम हटते रहे हैं, हटते रहे हैं, हटते रहे हैं, और हमें पता ही नहीं था कि हम कहां जा रहे थे। ये 12, 14 करोड़ रुपये के चलार्थ नोट ब्रिटेन द्वारा इस देश को छोड़ने से पहले छापे गये थे, और भारत स्वतंत्रता अधिनियम में यह उपबंध किया गया कि उन्होंने जो कुछ किया है उसके लिये उनका दायित्व नहीं है। क्या वह वैध है? मेरा विचार यह है कि वह अवैध है। यदि उन्होंने जाते समय यह ऋण लिया है तो वे ही उत्तरदायी हैं। संविधान पारित हो जाने के पश्चात् भी इसके लिये उनका ही दायित्व है। इसका प्रभाव क्या पड़ा है? मैं आपसे और इस सदन के माननीय सदस्यों से प्रार्थना करता हूं कि इस पर जरा विचार करें। धातविक आधार के बिना ये 12, 14 करोड़ के चलार्थ के नोटों का मुद्रण किया गया, जिससे कि इस देश के लोगों पर दायित्व आ गया है, जिससे मुद्रास्फीति हो गई है और इस देश में मूल्य बढ़ गये हैं। विशेषज्ञ कहते रहे हैं कि वे मूल्य कम करेंगे और वे ऐसा करेंगे वैसा करेंगे, और वे इस बात पर चुप रहते हैं— लोगों पर आये हुए 12, 14 करोड़ रुपये के दायित्व को कम नहीं करना चाहते। यह लोगों के लिये जीवन तथा मृत्यु का प्रश्न है। यही हुआ है।

मैं यह बताना चाहता हूं कि इस संविधान को पूरा करने में हमें किन कठिनाइयों में से गुजरना पड़ा है और हम अंत में आ पहुंचे हैं। मैं सदन को तथा आप को बताना चाहता हूं, श्रीमान, कि हमने कितनी चीजें नहीं की हैं जिन का हम पर बहुत प्रभाव पड़ेगा। ऐसा संविधान बनाने से क्या लाभ है जिसमें ऐसे महत्वपूर्ण मामले को नहीं रखा गया है तथा इस भार को कम करने के लिये कुछ नहीं किया गया है। इस मुद्रा प्रसार के शाप को और कौन कम कर सकता है जिससे मूल्य बढ़े हैं, जिनसे सब कठिनाइयां पैदा हुई हैं? सरकार इस मुद्रास्फीति को कम करने के लिये इतने अन्य कदम उठा रही है। यदि वे उन 12, 14 करोड़ रुपये की चट्टान को नहीं तोड़ते तो वे मुद्रास्फीति को कैसे हटा सकते हैं? इन सब अंग्रेजों ने, अपने शासन-काल में, ये चलार्थ नीतियां आरंभ की थीं। उन्होंने यह मुद्राप्रसार किया तथा मुद्रावमूल्यन भी किया। इतने चलार्थ आयोग बने और प्रत्येक आयोग के अन्त में उन्होंने सदा ऐसे ही आदेश पारित किये जो अंग्रेज लोगों को सुविधाजनक थे।

जब 12 अरब 14 करोड़ रुपये के चलार्थ नोट अनधिकृत रूप से छपे हैं तो उन्हें वापस लेने का भी कोई उपाय होना चाहिये। वास्तव में, कई देशों में ऐसा किया गया है। किन्तु यहां कोई ऐसी बात नहीं की गई और इसलिये मुझे भय है कि हम कठिनाई में हैं। यह अवमूल्यन कैसे हुआ, श्रीमान?

***अध्यक्षः** मैं माननीय सदस्य के भाषण में बाधा नहीं डालना चाहता। किन्तु मुझे भय है कि वे ऐसे विषयों पर बोल रहे हैं जो संविधान से, जिस पर हम चर्चा कर रहे हैं, संगत नहीं है। ये ऐसी बातें हैं जो सरकार से कही जा सकती थीं और सरकार को ही दोष दिया जा सकता था, या सदन जो कुछ करना चाहता सरकार के साथ कर सकता था। किन्तु यह बात अन्यत्र होनी थी, यहां नहीं।

***श्री टी. प्रकाशमः** श्रीमान, मैं विषयान्तर नहीं करना चाहता और संविधान पर ही चर्चा तक सीमित रहना चाहता हूं। मैं जिस बात का अभी निर्देश कर रहा था वह इस प्रकार संगत है: जो संविधान हमने बनाया है उसमें 1 शलिंग 6 पेन्स की विनिमय दर को बनाये नहीं रखना चाहिये था, जो कि भारत सरकार ने बहुत पहले स्वीकार की थी। दुर्भाग्य से वैसा नहीं किया गया है। इसी प्रकार मेरी बात इस चर्चा से संगत है।

अब श्रीमान, मैं व्यक्ति की स्वतंत्रता के उपबंध को लेता हूं जो हमने स्वीकार किया था। हमने विचार विमर्श तथा चर्चा के पश्चात् यह उपबन्ध बनाया था कि तीन मास तक व्यक्ति को मुकद्दमे के बिना निरुद्ध किया जा सकता है। इससे मुझे आश्चर्य हुआ और अब भी आश्चर्य है कि हमने ऐसा उपबंध रखा है। हम संसार के सामने अपनी स्थिति को उचित सिद्ध नहीं कर सकते। यह विचित्र बात है कि हम लोग ऐसा उपबंध रख रहे हैं जो कि ऐसे महान व्यक्ति द्वारा प्रशिक्षित तथा अनुशासित हुए हैं जिस ने केवल इस देश को ही नहीं शेष विश्व को भी शांति दी है, ऐसा क्यों हो, श्रीमान, कि तीन महीने के लिये कोई व्यक्ति बिना मुकद्दमे के निरुद्ध किया जा सके? मुझे खेद है कि हमने इसे स्वीकार किया है।

इस संविधान से एक बड़ा लाभ यह हुआ है कि अस्पृश्यता का अंत करके हरिजनों और अनुसूचित जातियों में ऐसी भावना भर दी गई है कि वे शेष जनता के बराबर स्तर पर आ गया हैं। उसके लिये हम कुछ श्रेय के भागी हैं।

मुझे यह भी प्रसन्नता है कि निदेशक सिद्धान्तों में पंचायत व्यवस्था रखी गई है। इसकी सफलता आप पर और दूसरों पर निर्भर है जो इस देश के तथा शासन के भार साधक होंगे। मुझे पता लगा था कि युक्त प्रान्त में पंडित गोबिन्द वल्लभ पंत के प्रशासन ने पंचायतें स्थापित कर दी हैं और आसाम ने तो उससे पहले ही ऐसा कर दिया था। यदि भारत के प्रांत इस उदाहरण का अनुसरण करें तो भारत के करोड़ों लोगों के उद्धार का दिन अधिक दूर नहीं होगा।

फिर एक और बात है, श्रीमान, जिसके विषय में मैं कुछ शब्द कहना चाहता हूं—वह है वयस्क मताधिकार। मुझे प्रसन्नता है कि हमने किसी आशंका या संदेह के कारण वयस्क मताधिकार में कोई परिवर्तन नहीं किया है। जब हमने संविधान बनाना आरम्भ किया था तब यह विचार था कि राज्यपाल निर्वाचित होना चाहिये। मुझे उस पर हर्ष था। किन्तु दुर्भाग्य से इस उपबंध में पूर्व परिवर्तन हो गया है। लोग मुझसे सहमत हों या न हों। यदि आप अपने ही लोगों पर विश्वास नहीं करेंगे तो वे कुछ नहीं कर सकेंगे। वास्तव में हमारे देश के लोग इस संविधान की रचना आरम्भ होने के पश्चात तीन वर्षों तक दृढ़ रहे हैं। और उससे पूर्व

[श्री टी. प्रकाशम]

भी वे ईमानदार, सीधे तथा सरकार के वफादार थे। अतः हमें ऐसी कोई बात नहीं करनी चाहिये जिससे उनमें ऐसी भावना हो कि हम उनका विश्वास नहीं कर रहे हैं।

फिर मैं मसौदा समिति के सभापति द्वारा नये अनुच्छेद 365 को पेश किये जाने का निर्देश करना चाहता हूं। उस अनुच्छेद के अनुसार यदि कोई प्रांत यहां की सरकार के आदेशों का पालन करने के लिये तैयार नहीं हो तो उस प्रान्त को संविधान के अन्तर्गत रहने के लिये अयोग्य घोषित किया जा सकता है। यह तो केवल भारत शासन अधिनियम की धारा 93 का अनुकूलन ही है जिसके अनुसार प्रान्त के प्रशासन को राज्यपाल अपने हाथ में ले सकता था। हमारे लिये यह अच्छा नहीं है। हम देश की स्वतंत्रता के लिये अत्यन्त स्पष्ट रूप में लड़ चुके हैं अतः हमें ऐसा उपबंध नहीं रखना चाहिये। इस देश में हमें लोकतंत्र का विकास इस प्रकार नहीं करना चाहिये। प्रांतों में यदि त्रुटियां हों, तो आपको चाहिये कि उन्हें स्वयं सुधारने का अवसर दें।

आपको ऐसी वैसी बातों पर हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये और उन्हें हट जाने के लिये नहीं कहना चाहिये, इस आधार पर कि वे आपकी आज्ञा पालन के लिये तैयार नहीं हैं। लोकतंत्रात्मक संविधानों को बनाने या कार्यान्वित करने का यह तरीका नहीं है और देश में इस प्रकार जनता की स्थिति को नहीं बनाये रखा जा सकता। यदि हम जनता को अपने साथ रखना चाहते हैं तो उन्हें आजादी दे दीजिये। मुझे इस प्रान्तीय स्वायत्तता के कारण स्वयं कष्ट सहन करना पड़ा है, किन्तु इस कारण मैं यह शिकायत नहीं करता कि उसके कारण आप उनके स्वशासन के अधिकार को छीन लें। यह उलटा कदम है जो हमें सर्वथा नहीं उठाना चाहिये था।

एक और बात है जिसे मैं इस अवसर पर कहे बिना नहीं रह सकता—वह है केन्द्रीकरण। सरकार तथा यह संविधान-निर्माता निकाय भी इस बात के लिये उत्सुक था कि सब चीजों को केन्द्रीय बना दिया जाये, केन्द्र को सब शक्ति दे दी जाये। एककों का क्या होगा? संयुक्त राज्य में एककों का क्या हुआ? तरेपन या चौवन एकक अलग-अलग ले और उन्होंने अपने आपको प्रभुत्व-सम्पन्न घोषित कर दिया और लड़ाई चलाई, उन्होंने अपने संविधान स्थापित कर लिये। इसी प्रकार स्विटजरलैंड में 22 केन्टन हैं। स्विटजरलैंड संसार में सबसे अधिक आदर्श देश है। गत दो सार्वदेशिक आर्थिक कठिनाइयों में स्विटजरलैंड ही एक देश था जिस पर प्रभाव नहीं पड़ा। उस देश में 22 एकक थे जिनमें से प्रत्येक को प्रभु शक्ति प्राप्त थी, वे अपना प्रशासन पूर्व रूप में चलाते थे बहुत प्रशंसनीय ढंग से चलाते थे जो देश की रक्षा के लिये तथा उस देश की भलाई के लिये था। आज कल वह बेदाग देश है। इसी प्रकार संयुक्त राज्य भी है, जिसके लिये हमारे प्रधान मंत्री ने इतना कहा है। उन्होंने हमें चेतावनी दी है कि अमरीका एक पूर्ण देश है। वह किसी से अपनी रक्षा कर सकता है। साथ ही उन्होंने कहा था कि हमें अमरीका संबंधी नारे ही नहीं लगाने चाहिये किन्तु अपने आप को भी अनुकूल बनाना चाहिये। उसी वाक्य में उन्होंने, तुलना के रूप में गांधी जी के सिद्धान्तों की चर्चा की थी। वे ऐसे व्यक्ति हैं जो गांधी जी के सिद्धान्तों को ले सकते थे, अन्य सिद्धान्तों को भी ले सकते थे और उनका संमिश्रण करके, अमरीका

जाकर के उन्हें तथा अन्य देशों को शांति का संदेश दे सकते थे, और शांति करने की भरसक प्रयत्न कोशिश कर सकते थे। किन्तु वे गांधी जी के रचनात्मक कार्यक्रम पर और देश के भाषावार संगठन अथवा विभाजन के सिद्धान्त पर ध्यान नहीं दे सकते हैं।

धन्यवाद, श्रीमान।

***प्रो. शिब्बल लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्तः जनरल): अध्यक्ष महोदय, भारत के इतिहास में यह ऐतिहासिक अवसर है जब कि यह महान सभा अपना कार्य समाप्त करने वाली है। स्वतंत्र भारत का अज्ञात शताब्दियों के पश्चात् यह पहला स्वतंत्र संविधान होगा। भारत एक प्राचीन देश है और उसका इतिहास विस्मृत अतीत काल से आरम्भ होता है। बहुत प्राचीन साहित्य है। किन्तु मुझे किसी ऐसे लिखित संविधान का ज्ञान नहीं है जो प्राचीन भारत में रचा गया हो, जिसमें समस्त देश के शासन की व्यवस्था हो तथा जो आज भी उपलब्ध हो। हमें मनुस्मृति का पता है और प्राचीन भारत के अन्य महान विधि-रचियता का पता है, किन्तु शायद ऐसे किसी विस्तृत लोकतंत्रीय संविधान की कभी रचना नहीं हुई जिसमें इस समस्त उपमहाद्वीप के शासन की व्यवस्था हो जो दक्षिण में कुमारी अंतरीप से उत्तर में गिलगित तक, और पूर्व में लेडो से लेकर पश्चिम में पेशावर तक विस्तृत है। अशोक के समान महान भारत सम्राट भी हुए हैं जिनके साम्राज्य में समस्त उप-महाद्वीप शामिल था। हमारे पास उस के शासन के कुछ विभागों का विस्तृत विवरण है परन्तु उन दिनों का लिखित संविधान हमारे पास नहीं है। अतः असंख्य शताब्दियों के पश्चात् और कदाचित ज्ञात इतिहास में सर्वप्रथम, देश के प्रत्येक भाग से निर्वाचित प्रतिनिधि संविधान सभा के रूप में एकत्र हुए हैं तथा उन्होंने अपने लिए संविधान बना कर आत्मार्पित किया है।

किन्तु हम भूल नहीं सकते कि यह संविधान विभक्त भारत का संविधान है जिसमें हमारी मातृभूमि भारत के प्रदेश का 4/5वां अंश ही शामिल है, जिस भारत के लिये गुरुदेव रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने यह गीत गाया था:

जनगणमन अधिनायक जय हे,
भारत भाग्य विधाता।
पंजाब, सिंधु, गुजरात, मराठा,
द्राविड़, उत्कल, बंग।
विन्ध्य, हिमाचल, यमुना, गंगा,
उच्छल जलधि तरंग।

भारत विभाजन महानतम दुर्घटना है जैसी भारत में अर्वाचीनकाल में कोई और नहीं हुई। हमें यह स्वतंत्रता का मूल्य चुकाना पड़ा है। अंग्रेजों में हृदय परिवर्तन के कारण भारत के प्रति कोई प्रेम का अकस्मात प्रादुर्भाव नहीं हो गया था जिससे कि वे हमारे देश से चले गये हैं, उन्हें परिस्थितियों के वशीभूत होकर, अंतर्राष्ट्रीय शक्तियों तथा राष्ट्रीय आन्दोलन की शक्ति के कारण, जो महात्मा गांधी के

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

आश्चर्यजनक नेतृत्व में चल रहा था, भारत छोड़ने के लिये बाध्य होना पड़ा। देश पर अत्यन्त अस्वाभाविक विभाजन थोपा गया। मुझे विश्वास है कि जब तक यह विभाजन रहेगा, तब तक न भारत न पाकिस्तान ही शांति में रह सकते हैं। दोनों भागों की मुक्ति अंततः इसी में है कि भारत के दोनों भागों का पुनः एकीकरण कर के एक सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाया जाये। मैंने गत तीस वर्षों से जिस स्वतंत्र भारत का स्वप्न देखा है वह तो तभी पूरा होगा जब यह विभक्त भारत के स्थान पर समस्त भारत का, जो विभाजन से पूर्व था, संविधान बन जाये। मुझे विश्वास है कि हमारी मातृभूमि का यही स्वाभाविक लक्ष्य है।

मुझे आज अपने करोड़ों देशवासियों का ध्यान आता है, उन अज्ञात वीरों और शहीदों का ध्यान आता है जो 92 वर्ष से, जब से 1857 में भारत की स्वतंत्रता का प्रथम संग्राम हुआ था, स्वतंत्रता के संघर्ष में, बलिदान हुए। हमारे उन करोड़ों देशवासियों के बलिदानों के कारण ही यह दिन उगा है। उन वीरों तथा शहीदों में, हम उन महान देशभक्तों को नहीं भूल सकते जो अब पाकिस्तान कहलाने वाले क्षेत्र में रह गये हैं। आज मेरा हृदय भारी हो जाता है जबकि मुझे खान अब्दुल गफ्फार खां तथा उनके हजारों खुदाई खिदमतगारों की याद आती है: जिन्होंने भारत की स्वाधीनता के लिये अपना रक्त बहाया था और जो आज पाकिस्तान के जेलों में दुखमय जीवन काट रहे हैं। मैं विभाजन के कट्टरतम विरोधियों में से था, और मैं अनुभव करता हूं कि हमने खान भ्राताओं और लाखों खुदाई खिदमतगारों के साथ धोखा किया, जिन्हें हमने पाकिस्तान मानकर मध्य धार में छोड़ दिया। हम पूर्वी बंगाल में भी अपने लाखों देशवासियों को भूल नहीं सके, वहीं बंगाल के क्रांतिकारियों का स्थान है जिन्होंने हमारे देश में स्वतंत्रता की अग्नि को पहली बार सुलगाया था। भारत तब तक पूर्णतः स्वतंत्र नहीं होगा जब तक कि वे भाग जो कट गये हैं फिर न मिल पायें। हमें लाखों शरणार्थियों को भी नहीं भूलना चाहिये जो विभाजन के परिणामस्वरूप, जिसे हमने अपनी स्वतंत्रता के मूल्य के रूप में स्वीकार किया था, मृत्यु को प्राप्त हुये या अपना सर्वस्व खो कर अकिंचन बन गये। वे निस्संदेह हमारी स्वतंत्रता के शहीद हैं। आखिर, इस अवसर पर हम राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को भूल नहीं सकते। जिन्होंने हममें से अधिकांश में स्वतंत्रता की ज्योति जलाई थी और जो अपने परिश्रम को सफल होते नहीं देख सके। मैं अन्य महान नेताओं को, लोकमान्य तिलक, लाला लाजपत राय, देशबंधु चितरंजन दास, पं. मदन मोहन मालवीय, हकीम अजमल खां, पंडित मोती लाल नेहरू आदि को भी नहीं भूल सकता जिन्होंने हमारे मार्ग को प्रकाशित किया है। मैं विशेषतः नेता जी सुभाष चन्द्र बोस का स्मरण करना चाहता हूं जिन के विषय में अब भी लालसा है कि वे अभी तक कहीं पर जीवित हैं, और जिनकी आजाद हिन्द फौज ने और दक्षिण पूर्वी एशिया में उसकी शानदार विजयों ने भारतीय सेना और भारतीय नौ-सेना और भारतीय नभबल में देशभक्ति पूर्ण और राष्ट्रीय भावनाओं को जागृत किया और स्वतंत्रता के दिन को अधिक निकट बुला लिया। मैं इस ऐतिहासिक तथा विख्यात उपलक्ष पर राष्ट्र के इन सब भक्तों, वीरों तथा शहीदों के प्रति अपनी श्रद्धांजलि भेंट करना चाहता हूं।

मुझे बहुत खेद है कि सदन मेरा संशोधन स्वीकार करने के लिए सहमत था जिसके द्वारा मैं इस संविधान को आरम्भ में ही प्रस्तावना में हमारे स्वतंत्रता संघर्ष

के वीरों तथा शहीदों को और राष्ट्रपिता को श्रद्धांजलि देना चाहता था मैं अनुभव करता हूं कि सदन ने ऐसा करके बुद्धिमानी नहीं की।

अब संविधान के विषय में, मैं प्रारम्भ में ही कहता हूं कि यह मध्यमार्ग है और उसमें मध्यमार्ग की समस्त त्रुटियां हैं। यह कांग्रेस दल में विभिन्न विचारों के लोगों के बीच जो रूढ़िवादी भी हैं, क्रान्तिवादी भी हैं, समझौता है। एक सहस्र वर्षों की स्वतंत्रता से नव प्राप्त स्वतंत्रता के बीच के संक्रमण काल में, यह शायद स्वभाविक ही है कि हमें वर्तमान स्थिति पर विचार करना चाहिये जो इस संविधान में प्रतिबिम्बित है। मैं इसे मेरे स्वप्नों के स्वतंत्र भारत का संविधान नहीं कह सकता। अतएव इसे स्वीकार करने के लिये डॉ. अम्बेडकर के प्रस्ताव का मैं इसी भावना के साथ समर्थन कर सकता हूं। मुझे विश्वास है कि शीघ्र ही, संक्रमण काल समाप्त हो जाने पर, भारतीय जनता के प्रतिनिधि, वयस्क मताधिकार के आधार पर जागृत मतदाताओं द्वारा निर्वाचित होकर इस संविधान की पुनर्रचना करेंगे और ऐसा संविधान बनायेंगे जिससे हमारे स्वप्न पूरे होंगे। मैं चाहता था कि सदन मेरे इस संशोधन को स्वीकार कर लेता कि आरम्भ के पश्चात् दस वर्ष के अन्त में यह संविधान साधारण बहुमत से स्वतः पुनरीक्षित होता। वर्तमान परिस्थितियों की सीमा के अन्तर्गत, मुझे विश्वास है कि इससे अच्छा, संविधान नहीं बन सकता था। अतएव इस सफलता के लिये मैं उन सबको बधाई देता हूं, विशेषतः उन समितियों के सदस्यों को, जिन्होंने हमारे नेताओं की अध्यक्षता में संविधान के सिद्धान्तों को निश्चित करके अपने विवरण पेश किये थे, जैसे कि संघ शक्ति समिति, प्रांतीय संविधान समिति, अल्पसंख्यक समिति और अन्य बहुत सी समितियां हैं। इन समितियों ने जो सिद्धान्त निश्चित किये थे उन्हें प्रथम पठन में इस समिति ने स्वीकार किया था और मसौदा समिति ने उन्हें विधि का रूप दे दिया। मैं तो यह बहुत चाहता था कि इस संविधान पर सदन समिति स्टेज में विचार करता, जिससे सब संशोधनों पर पूर्णतः चर्चा हो सकती, समूचे सदन के बहुमत से विनिश्चय होता, केवल कांग्रेस दल के ही बहुमत से नहीं।

हमने जो प्रक्रिया स्वीकार की थी, उसके अन्तर्गत मसौदा समिति समूचे सदन के स्वतंत्र मत का लाभ नहीं उठा सकी और केवल कांग्रेस दल के विनिश्चय ही उसके लिये बाध्यकारी थे। मेरा व्यक्तिगत रूप से यह अनुभव है कि इसी कारण संविधान में बहुत सी त्रुटियां रह गई हैं। गत वर्ष समय-समय पर कार्यावली में जो 10,000 संशोधन छपे थे उनमें से मेरे विचार में सदन को मुश्किल से कुछ सौ पर विचार करने का अवसर मिला था। शेष सब का कांग्रेस दल में ही गला घोट दिया गया और वे इस सदन में पेश ही नहीं किये गये क्योंकि दल ने उन्हें स्वीकार नहीं किया था। कांग्रेस दल की बैठकें वास्तविक संविधान सभा की बैठकें बन गईं, और यह वास्तविक सभा नाट्य सभा बन गई जहां कांग्रेस दल में किये गये विनिश्चयों को पंजीबद्ध किया जाता था। किन्तु कांग्रेस दल की वे बैठकें ऐसे प्रकार की थीं कि वे इस समूचे सदन की उन बैठकों का स्थान नहीं ले सकती थीं जो समिति स्टेज में बैठकर विभिन्न संशोधनों पर स्वतंत्र निर्णय करतीं।

इस संविधान सभा ने संविधान बनाने में जो लम्बा समय लगाया है उस पर कुछ आलोचना हुई है। मेरे विचार में आलोचना बहुत अनुचित है और ठीक नहीं

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

है। अब तक इस सभा के 11 सत्र हुए हैं, उन सबमें 200 दिन लगे। इन सत्रों में सभा प्रायः 5 दिन प्रति सप्ताह बैठती थी। अतः कुल 120 दिन काम हुआ है। गत तीन वर्ष में इस सभा पर जो खर्च आया है वह एक करोड़ रुपये से कम है। मैं नहीं समझता कि स्वतंत्र भारत का संविधान बनाने में यह समय बहुत लम्बा है या ये खर्च बहुत ज्यादा है। मेरा व्यक्तिगत रूप में यह ख्याल है कि संविधान के कुछ भागों को जल्दबाजी में पारित किया गया है और उन पर समुचित ध्यान नहीं दिया गया है। यदि, इतना होते हुए भी, हम काफी अच्छा संविधान बनाने में सफल हो गये हैं, मेरे विचार से इसका श्रेय मसौदा समिति को और उसके विद्वान सभापति की बुद्धिमत्ता, योग्यता और अनथक परिश्रम को मिलना चाहिये। श्री एस.एन. मुखर्जी और उसके योग्य कर्मीवृंद को भी कम श्रेय नहीं है। मेरे विचार में भारत को श्री एस.एन. मुखर्जी की योग्यतापूर्ण मसौदाकारी तथा अनन्त परिश्रम पर गर्व होना चाहिये। संविधान की रचना में उनके गुणों का पता लग गया है।

अब संविधान के उपबन्धों को लेते हैं तो मैं वयस्क मताधिकार उसका सबसे बड़ा गुण समझता हूं। अब भारत का जनसाधारण अपने भाग्य का निर्माता बन जायेगा। मैं उनकी आशंकाओं को नहीं समझ पाता जो वयस्क मताधिकार से डरते हैं। हमें जनसाधारण पर भरोसा करना चाहिये। वयस्क मताधिकार कांग्रेस के समूचे संघर्ष में उसकी मुख्य मांगों में से था। अतः हमें आज गर्व होना चाहिये कि वह स्वप्न पूरा हो गया है। वयस्क मताधिकार के पश्चात् में मूलाधिकारों को महत्व देता हूं। मूलाधिकारों में, मनुष्य मनुष्य में समानता हमारे संविधान में निश्चित कर दी गई। अब विधि द्वारा प्रतिज्ञात अस्पृश्यता नहीं रहेगी। अस्पृश्यता की समाप्ति की तुलना अमरीका में दासता की समाप्ति से की गई है किन्तु मेरे विचार में अस्पृश्यता दासता से भी बढ़ा अभिशाप है। विधि के समक्ष प्रत्येक मनुष्य की समानता को भी प्रत्याभूत किया गया है। किन्तु हमारे संविधान में स्वतंत्रता की हत्या कर दी गई है। मेरे विचार में धारा 21 और 22 इस संविधान पर सबसे बड़े धब्बे हैं। मैं इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकता था कि स्वतन्त्र भारत के संविधान में बिना मुकदमे निरोध की जनता के मूलाधिकारों के अधीन, अनुमति दे दी जायेगी। स्वाधीनता संग्राम में मैंने छः विभिन्न अवसरों पर छः मुकदमों में लगभग 31 वर्ष का दण्ड प्राप्त किया है और ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत हमारी दासता के दिनों में मैंने अपने यौवन के 10 वर्ष कारागृह की कोठिरियों में, नजरबन्द के रूप में या दण्ड प्राप्त बन्दी के रूप में गुजारे हैं, अतः मैं जानता हूं कि बिना मुकदमे निरूद्ध होने में कैसा कष्ट होता है और मैं कभी उसका समर्थन नहीं कर सकता। अनुच्छेद 358 तथा 359 भी संविधान पर उतने ही बड़े कलंक हैं, जिनमें आपात के समय मूल अधिकारों को निलम्बित करने के और उनको क्रियान्वित करने के उपायों के उपबन्ध हैं। मेरे विचार में यह मूल अधिकारों का मजाक उड़ाना है। मैं अनुच्छेद 31 को भी इस देश में पूंजीवाद का अधिकार पत्र समझता हूं। मुझे विश्वास है कि वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित जनता के प्रतिनिधि इस अनुच्छेद को बदल देंगे जिससे उत्पादन के साधनों का समाजीकरण असम्भव हो जायेगा। राज्य की नीति के निदेशक सिद्धान्त, जिनका विवरण भाग 4 में इतने सुन्दर ढंग से किया गया है, तब तक पूरे नहीं हो सकते जब तक कि अनुच्छेद 31 इस संविधान का भाग है। मैं तो चाहता था कि ये

निदेशक सिद्धान्त संविधान में मूल अधिकारों के रूप में रखे जाते। मैं जानता हूं कि उन पर आज अमल करना संभव नहीं है। किन्तु हम कह सकते थे कि 10 वर्ष के अंत में निदेशक सिद्धान्त स्वत: मूल अधिकार बन जायेंगे। मैंने इसी उद्देश्य से अपना संशोधन सं. 559 भेजा था जो संशोधनों की सूची के ग्रंथ 1 में था, जिसमें आर्थिक स्वतन्त्रता के चार अधिकारों की चर्चा थी जो सोवियत संविधान में उपबन्धित हैं। इस समय हमारे संविधान में ऐसी कोई बात नहीं है और मेरे विचार में यह उस की कमजोरियों में से है।

एक और अनुच्छेद जिसे मैं जनता के लिये अत्यन्त अन्यायपूर्ण समझता हूं अनुच्छेद 28 है जिसमें यह लिखा है कि राज्य निधि से सर्वथा पोषित किसी शिक्षा संस्था में कोई धार्मिक शिक्षा नहीं दी जायेगी। मैं धार्मिक शिक्षा को, जिससे मेरा आशय सच्चे धर्म की तथा उसके शाश्वत सिद्धान्तों से है, बालक की शिक्षा का अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग समझता हूं। किन्तु राज्य के शिक्षालयों में धार्मिक शिक्षा पर रोक लगाने का परिणाम यह हो सकता है कि विद्यालयों में गीता और रामायण जैसी पुस्तकों को पढ़ाने का भी वर्जन हो जायेगा। मुझे विश्वास है कि जनता के प्रतिनिधि इस वर्जन को सहन नहीं करेंगे और इस अनुच्छेद का शीघ्र ही संशोधन करना पड़ जायेगा। यह ऐसा उदाहरण है जहां लौकिकता की अति कर दी गई है।

मेरे विचार में, निदेशक सिद्धान्तों का अध्याय संविधान में सबसे अधिक आशापूर्ण अध्याय है। मुझे आशा है कि इसमें स्वतन्त्र भारत के लिये आदर्श के रूप में जो सिद्धान्त रखे गये हैं, वे निकट भविष्य में ही क्रियान्वित होंगे और देश की विधि में उन्हें स्थान मिल जायेगा। देश भर में गोवध के वर्जन से ही भारत के जनसाधारण के विचारों में जोश पैदा हो सकता है। मैं चाहता हूं कि गोवध का निषेध पूर्ण ही होता और मूल अधिकारों में स्थान पाता, क्योंकि गाय ही कामधेनु है जिससे सब सिद्धियां प्राप्त होती हैं।

प्रशासन व्यवस्था के विषय में मैं बहुत चाहता था कि गणराज्य का राष्ट्रपति प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होता। मैं एकसदनीय विधान-मंडल रखना भी पसन्द करता था। मैंने सदा उच्चतम न्यायालय तथा महालेखापरीक्षक की शक्तियों और स्वतन्त्रता में प्रत्येक हस्तक्षेप का विरोध किया था। मैं उच्चतम न्यायालय को जनता की स्वतन्त्रताओं का संरक्षक और महा लेखापरीक्षक को राज्य के वित्तों का प्रहरी समझता हूं, मैंने सदा राष्ट्रपति की मनमानी शक्तियों का भी विरोध किया है क्योंकि राष्ट्रपति का अर्थ है कार्यपालिका, और मेरी यही इच्छा थी कि ऐसे मामलों में अन्तिम शक्ति संसद में ही निहित हो। राष्ट्रपति को अध्यादेश जारी करने की जो शक्तियां दी गई हैं मैं उनको भी पसन्द नहीं करता मुझे केवल यही आशा है कि जब संविधान की पुनर्रचना होगी तब उसकी ये सब अलोकतन्त्रात्मक बातें हट जायेंगी।

संविधान के विषय में मेरी आलोचना का यह अर्थ नहीं है कि मैं उन सफलताओं की ओर से आंखें मूंद रहा हूं जो हमने इन तीन वर्षों में प्राप्त की हैं। मैं समझता हूं कि इस संविधान की रचना ही स्वत: गत तीन वर्ष की सबसे बड़ी सफलता है। ब्रिटिश सरकार ने स्वतन्त्रता के प्रभात के मार्ग में जो रोड़े खड़े किये थे जैसे कि अल्पसंख्यकों की समस्या की अकृत्रिम सृष्टि, देशी राज्यों में नरेशों की तथा अन्यत्र स्वर्ग से अवतरित सिविल सेवाओं की समस्याएं, वे रोड़े

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

गत दो वर्ष के छोटे से काल में जादू के समान समाप्त कर दिये गये हैं। संविधान की रचना में जो देर हुई है उसके कारण हम इस संविधान में 566 देसी राज्यों के प्रशासन के लिये भी उपबन्ध रख सके हैं जिन्हें अब नौ प्रान्तों के रूप में संगठित करके संघ के अन्य अंगों के बराबर रख दिया गया है। यही अकेला कार्य ऐसा महान कार्य समझा जायेगा जैसा कभी किसी देश में नहीं हो सका था। हमारे प्यारे नेता सरदार बल्लभभाई पटेल ने रक्तहीन क्रान्ति के द्वारा यह महान कार्य किया है जिसके लिये भावी सन्तति सदा कृतज्ञ रहेगी। किन्तु यहां मैं कश्मीर सरकार के रूख पर अपनी निराशा को नहीं छिपा सकता जिसने अनुच्छेद 370 के अधीन पृथक् संविधान बनाने का हठ किया है। किन्तु कश्मीर सरदार पटेल का उत्तरदायित्व नहीं है। सरदार पटेल का दूसरा महानतम कार्य यह है कि उन्होंने अल्पसंख्यक समिति के सभापति के रूप में अल्पसंख्यकों की समस्या को हल किया है। मैं यहां श्री एच.सी. मुखर्जी, उस महान् ईसाई नेता, का नाम नहीं भूल सकता जो अल्पसंख्यक समस्या के सुखद समाधान के लिये प्रधानतः उत्तरदायी समझे जा सकते हैं उनकी राष्ट्रीयता की उत्कट भावना का सब अल्पसंख्यकों पर प्रभाव पड़ा और राष्ट्र सदा उनका ऋणी रहेगा। संविधान की एक और महान सफलता भाषा की समस्या का समाधान है। जो समझौता हुआ है उस पर मुझे जरा भी खुशी नहीं है और हिन्दी भाषा को देश की राष्ट्रभाषा के रूप में पूरी तरह अपनाने के लिये 15 वर्ष की जो कालावधि नियत की गई है उसे मैं बहुत लम्बी समझता हूं, किन्तु मुझे यह आशा अवश्य है कि वास्तव में जनता शीघ्रता करेगी और इस समय अंग्रेज़ी का और समस्त अंग्रेज़ी वस्तुओं का जो प्रेम है वह शीघ्र ही हट जायेगा।

मुझे यह भी खेद है कि संविधान का प्राधिकृत रूप राष्ट्रभाषा में स्वीकृत नहीं हुआ है। मैं बहुत चाहता था कि आप अपने प्राधिकार से जिस हिन्दी अनुवाद को प्रकाशित करेंगे वह संविधान का प्राधिकृत रूप होकर इस सभा के द्वारा पारित किया जाता। मुझे आशंका है कि जब इस देश से अंग्रेज़ी की प्रभुता चली जायेगी तब हमारे देशवासियों को हमारे संविधान के इस अंग्रेजी मूलरूप का निर्वचन करने में कठिनाई होगी। मुझे लगभग विश्वास है कि बहुत शीघ्र जनता के नये निर्वाचित प्रतिनिधि संविधान के प्राधिकृत रूप को राष्ट्रभाषा में पारित करने का हठ करेंगे।

अन्ततः श्रीमान, हमने ब्रिटिश राष्ट्रमंडल से अपना संबन्ध बनाये रखने का जो विनिश्चय किया है उस पर मैं अपनी कटु निराशा को व्यक्त करना नहीं भूल सकता। मैं इसे हमारी प्रभुता का अल्पीकरण समझता हूं। मुझे विश्वास नहीं होता कि सर्प अपने विष को एक दिन में ही छोड़ सकता है, और मैं अनुभव करता हूं कि ब्रिटिश राष्ट्रमंडल से हमारा सम्बन्ध हमारे लिये किसी प्रकार कभी उपयोगी नहीं हो सकता। हमें इसका पहला फल यह मिला है कि हमारे चलार्थ का नाशकारी अवमूल्यन हो गया है। मुझे आशा है कि हम शीघ्र ही अपनी दासता की मनोवृत्ति से छुटकारा पा सकेंगे और यह प्रत्येक ब्रिटिश वस्तु का प्रेम मिट जायेगा, और हम विश्व में पूर्ण स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में अपना सर ऊंचा उठाये खड़े होंगे और संसार के महानतम राष्ट्रों में स्थान पायेंगे।

अंत में श्रीमान्, मैं अन्य वक्ताओं के समान आपको अपनी श्रद्धांजलि पेश करना चाहता हूं कि आपने इस महान् और ऐतिहासिक सभा की कार्यवाही को चलाने में धैर्य, योग्यता तथा स्वतन्त्रता से काम लिया। हम सबने यह अनुभव किया कि आपने हमें संविधान के प्रत्येक पहलू पर अपना दृष्टिकोण प्रकट करने की पूर्ण स्वतन्त्रता दी है। समय समय पर, चर्चा के समय जो विभिन्न प्रश्न उठे थे उन पर निर्णय देने में आपने जो स्वतन्त्रता बरती उसकी भी हम सराहना करते हैं। मैं आपके उस निर्णय को नहीं भूल सकता जब कि आपने राष्ट्रमंडल में शामिल होने के संकल्प पर मुझे अपना संशोधन पेश करने की अनुमति दे दी थी। उस पर प्रधान मंत्री जैसे व्यक्ति ने भी प्रबल आपत्ति की थी। किन्तु बहुत शांत तरीके से आपने निर्णय दे दिया "सदन के नियमों से वह पेश हो सकता है।" भावी संतति के लिये आपकी मिसाल पथ प्रदर्शन के लिये ज्योति के रूप में रहेगी। श्रीमान्, मैं आपको धन्यवाद देता हूं कि आपने मुझे इस अवसर पर अपने विचार प्रकट करने का मौका दिया।

माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकल्स राय (आसाम: जनरल): अधयक्ष महोदय, मुझे बहुत प्रसन्नता है कि मैं डॉ. अम्बेडकर के इस प्रस्ताव का समर्थन करने आया हूं कि 'सभा द्वारा निश्चित रूप में संविधान पारित किया जाये।' मेरे विचार में यही सर्वोत्तम संविधान है जो वर्तमान परिस्थितियों में भारत में या संसार में बन सकता था। यद्यपि इसमें निस्संदेह त्रुटियां हैं, यद्यपि हम कुछ उपबन्धों को दूसरे रूप में रखना चाहते थे, फिर भी, श्रीमान, मेरा विश्वास है कि यही सर्वोत्तम है जो वर्तमान परिस्थितियों में हो सकता था। मुझे प्रसन्नता है श्रीमान् कि इस संविधान की रचना में मैंने भी भाग लिया है, यद्यपि वह छोटे से तरीके से ही है। समस्त देश ने इस संविधान की रचना में, आलोचना करके या सुझाव देकर के भाग लिया। संविधान का प्रारूप लगभग दो वर्ष पूर्व देश के समक्ष रखा गया था, और हमें सबको आलोचना करने का या सुझाव भेजने का अवसर मिला था, और इस संविधान सभा में हम सबने इस संविधान की रचना में भाग लिया है। अत: हम कह सकते हैं कि यह संविधान समस्त देश के लिये है और समस्त देश के द्वारा बनाया गया है। मैं इस संविधान को भारत की विद्यमान परिस्थितियों में संतोषजनक बता रहा हूं, मैं क्योंकि उस स्थिति को नहीं भूल सकता जो उस समय थी जब हम यहां लगभग तीन वर्ष पूर्व प्रथम बार एकत्र हुए थे। उस समय हम ब्रिटिश केबिनेट मिशन की छाया में थे। हमें केबिनेट मिशन ने यह पंचाट दिया था कि भारत वर्गों में विभक्त हो जायेगा। तीन वर्ग बनने थे। आसाम को बंगाल के वर्ग में रखा जाना था। उत्तर पश्चिमी सीमा प्रान्त, पंजाब और सिंध का एक वर्ग बनना था और भारत के अन्य भाग अन्य वर्ग में जाने थे। उस समय हम आसाम के सदस्य डरते थे कि यह वर्गीकरण हम पर लाद दिया जायेगा, किन्तु वहां अन्य सब कोई उस वर्गीकरण व्यवस्था में आने के लिये तैयार थे चाहे उनकी इच्छा के विरूद्ध होता। वर्ग-व्यवस्था का विरोध करने पर हमारी हंसी उड़ाई गई। हमने अनुभव किया कि यदि हमें बंगाल के साथ वर्ग में रखा गया तो आसाम के लोगों के जीवन पर ही प्रभाव पड़ेगा। इस सभा के सदस्यों को पता है कि हमारे कारण क्या थे। हमें भय था कि हमें उससे हानि होगी। वास्तव में हमारा संघर्ष जीवन मरण का था। हमने अनुभव किया कि हम किसी भी परिस्थिति में बंगाल के वर्ग में नहीं जा सकते थे। हम उस समय ऐसी कठिनाई में थे कि आसाम के प्रधान मंत्री श्री गोपीनाथ बरदलोई को कार्यसमिति के पास

[माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकल्स राय]

आना पड़ा जिसने आसाम की प्रार्थना के सुनने से लगभग इनकार ही कर दिया, और उन्हें महात्मा गांधी से अपील करनी पड़ी, और उनसे प्रार्थना की कि हमें इस आफत से बचाया जाये, और महात्मा गांधी ने ही हमें उस परिस्थिति से बचाया। हमें उन दिनों को नहीं भूलना चाहिये और आसाम के सदस्यों की कुछ लोग मज़ाक सी उड़ाते हैं कि हम केवल आसाम के ही विषय में सोचते रहते हैं, और हम समूचे भारत के विषय में नहीं सोचते। हमें अपने जीवन के लिए संघर्ष करना पड़ा। मुझे यह कहने में हर्ष है कि महात्मा गांधी ने ही हमें उस स्थिति से बचाया, जब कि उन्होंने श्री बरदलोई से कहा "यदि आप इस वर्ग के अधीन नहीं रहना चाहते तो पृथ्वी पर कोई भी आपको उसमें आने के लिये बाध्य नहीं कर सकता।" ज़रा सोचिये, कि यदि हम उस वर्ग-व्यवस्था को स्वीकार कर लेते तो आज भारत की दशा कैसी होती, आज हमारा संविधान कैसा होता। भारत बिल्कुल एक भिन्न प्रकार का देश होता। अब हमारे पास जो शक्तियां हैं वे सर्वथा भिन्न होती। मेरे मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद सदा केन्द्रीयकरण के लिये जोर देते रहते हैं, किन्तु आज यह संविधान काफी केन्द्रीयकरण वाला बना है वह कभी नहीं बनता यदि हम उस वर्ग-व्यवस्था के विरूद्ध लड़े न होते चाहे हमारा संघर्ष अच्छा था या बुरा हमें उस चीज से बचने के लिये संघर्ष करना पड़ा जिसे हम आसाम के लोगों के लिये और सारी जनता के लिये बुरा समझते थे। श्रीमान आसाम सीमान्त का प्रांत है। यदि उस प्रान्त को नहीं बचाया जाता, यदि वह प्रांत किसी ऐसे के साथ में चला जाता जो समूचे भारत के पक्ष में न हो, यदि आसाम किसी विपरीत शक्ति के हाथ में होता तो समूचा भारत भी चला जाता।

अब श्रीमान, हमें इस संविधान पर जो आज है, बहुत प्रसन्नता है क्योंकि इस संविधान से समस्त भारत का एकीकरण होगा। यद्यपि हमारे देश का एक भाग छिन गया है, यद्यपि विभाजन के कारण हमारी बहुत हानि हुई है, विशेषत: पाकिस्तान के पास के सीमा-क्षेत्रों की फिर भी चाहे अनिच्छा से ही सही, हमें कम बुराई को पसन्द करना पड़ा। मेरे विचार में आज हमारे यहां जो कुछ है वह उससे कम बुरा है जो उस स्थिति में होता यदि हम केबिनेट मिशन योजना के विरूद्ध न लड़े होते। मैं उनमें से था जिन्होंने सदन में तथा दल की बैठकों में भी यही कहा कि केबिनेट मिशन योजना एक मैत्रीपूर्ण श्रम सरकार की सिफारिश ही है, हम अपने तरीके से चल सकते थे और हम अपने आपको भारत की सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न संविधान सभा घोषित कर सकते थे जो हमारा संविधान बना सकती थी। मुझे प्रसन्नता है कि हमने ऐसा किया, और हमें अपने संविधान को अपने ही तरीके से बनाने का अधिकार मिला। श्रीमान, उस विरोध के कारण भारत का विभाजन हुआ, विशेषत: आसाम बहुत बड़ी कठिनाई में पड़ गया। हमारे क्षेत्रों के प्रति पाकिस्तानी मित्रों का जो रूख है उसके कारण हमारे प्रांत के कुछ भागों को कष्ट झेलना पड़ा। वे सीमान्त क्षेत्रों के बीच व्यापार तथा वाणिज्य के विषय में बहुत कठोर रूख अपना रहे हैं। उसी कारण हमें कष्ट उठाने पड़े। हम भारत सरकार से आशा करते हैं कि वह इन कष्टग्रस्त सीमा क्षेत्रों की सहायता करे क्योंकि पाकिस्तानी लोग उस कृषिजन्य माल को नहीं खरीदते जो आसाम के सीमान्त से आता है, जहां पहाड़ी जिले हैं, और कुछ मैदानी जिलों के भाग भी हैं, और इससे इन सीमा क्षेत्रों में हमारे लोगों को बहुत कठिनाई हो गई है। हम आशा कर रहे हैं कि भारत सरकार लोगों को इस कष्ट से छुटाने के लिये कुछ करेगी।

अब, श्रीमान, मैं वित्तीय स्थिति के विषय में राज्यों और केन्द्रीय सरकार के बीच सम्बन्धों के विषय में कुछ कहना चाहता हूं। हमारा यह मत था कि संविधान में सुनिश्चित प्रतिशत भाग का उल्लेख होना चाहिये जो राज्यों को, विशेषत: उत्पादक राज्यों को, उन राशियों में से मिलेगा जो केन्द्रीय सरकार चाय, पेट्रोल और पटसन पर आबकारी और निर्यात शुल्क के रूप में लेगी पर हम उस दिशा में अपने प्रयास में सफल नहीं हुए। राज्यों को ऐसी स्थिति में रखा गया है कि वे केन्द्र की दया पर हैं। अब केन्द्र को राज्यों की सहायता करनी होगी, कम से कम कुछ राज्यों की जो वित्तीय रूप में पिछड़े हुए हैं, विशेषत: आसाम और उड़ीसा की। वित्तीय वितरण के कारण, हम आसाम में बहुत कठिनाई में पड़ जायेंगे। जब 26 जनवरी आयेगी, तब भारत सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न लोकतन्त्रात्मक गणराज्य घोषित कर दिया जायेगा किन्तु हमारे निर्धन प्रान्त आसाम की क्या दशा होगी जब तक केन्द्रीय सरकार हमारी सहायता नहीं करेगी आसाम के लिये काम चलाना असम्भव हो जायेगा। अब भी, श्रीमान, आसाम घाटे में हैं। हमें लगभग दो करोड़ रुपये का घाटा रहेगा, और यदि केन्द्रीय सरकार हमारी सहायता को नहीं आती और वित्तीय कठिनाई में पड़े प्रांतों को सहायता करने की शक्ति का, जो उसे संविधान में दी गई है, प्रयोग नहीं करती, तो आसाम के लिये काम चलाना असम्भव हो जायेगा और वैत्तिक व्यवस्था पूर्णत: ठप्प हो जायेगी। अतएव यह आवश्यक है कि भारत सरकार को इस विषय में तत्काल कुछ कार्यवाही करनी चाहिये। मैं जानता हूं, कि मैं संविधान सभा में बोल रहा हूं, जो कि संविधान बना रही है, संसद में नहीं बोल रहा हूं, किन्तु श्रीमान, यहां बहुत से ऐसे हैं जो संसद के सदस्य हैं, जिन्हें आसाम प्रान्त में और उन प्रान्तों में अवश्य दिलचस्पी होगी जो वित्तीय कठिनाई में हैं। जब हमने केन्द्र को शक्तिशाली बनाया है, हम ने राष्ट्रपति को आपात में कार्यवाही करने की शक्ति दी है, तो केन्द्रीय सरकार या भारत के लिये इस प्रान्त को ठप्प होने देना श्रेय की बात नहीं होगी। मुझे विश्वास है कि श्रीमान, कि संसद तथा केन्द्रीय सरकार इस पर तत्काल ध्यान देगी; अन्यथा आसाम वित्तीय रूप में ठप्प हो जायेगा। कोई ऐसा उपाय होना चाहिये जिससे हमारे प्रांत की इन कठिन समयों में सहायता की जानी चाहिये। मैं इसके विषय में यहां इस लिये बोल रहा हूं कि मुझे इससे दु:ख हो रहा है। यदि आसाम इस सभा के प्रारम्भ में संघर्ष नहीं करता तो ऐसा संविधान बनता ही नहीं जैसा आज बना है। आसाम के कारण भारत में घटनाचक्र बदला है, और इस संविधान सभा को यह संविधान बनाने की स्वतन्त्रता मिली है, अत: मुझे आशा है कि यह देश आसाम की वित्त-व्यवस्था को ठप्प नहीं होने देगा। भारत को तत्काल हमारी रक्षा करनी चाहिये।

श्रीमान, मैं जो अगली बात कहना चाहता हूं वह नागरिकता के विषय में है। नागरिकता के विषय में हमने स्त्री और पुरुष को बराबर बना दिया है। एक पुरूष जो किसी विदेशी से विवाह करता है नागरिक ही रहता है और जो स्त्री किसी विदेशी से विवाह करे वह भी नागरिक बनी रहनी चाहिये। इस विषय में कोई अन्तर नहीं होना चाहिये। यदि अन्य मामलों में स्त्री तथा पुरूष में कोई अन्तर नहीं है तो नागरिकता के विषय में स्त्री और पुरुष में क्यों भेद भाव हो? श्रीमान, इस विषय में विधियां बनाने का अधिकार संसद को दिया गया है; उसे इस बात पर विचार करना चाहिये और इस मामले में किसी स्त्री और पुरूष में विभेद नहीं होने देना चाहिये। मुझे विश्वास है कि हमारी स्त्रियां—समस्त भारत की स्त्रियां इससे

[माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकल्स राय]

सहमत होंगी, और उठ कर अपने अधिकार के लिये लड़ेंगी। मुझे एक देश का पता है जहां किसी विदेशी से विवाह करने पर स्त्री की नागरिकता नहीं छिनती। भारत को उस स्तर से नीचे नहीं गिरना चाहिये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार: जनरल): बच्चों के विषय में क्या होगा?

***माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकल्स राय:** बच्चे उस देश के नागरिक होंगे जहां वे पैदा हों।

श्रीमान, हमें इस संविधान के बनाने में बहुत सी कठिनाइयों को पार करना पड़ा है। हमारे यहां अल्पसंख्यकों की समस्या थी और मुझे प्रसन्नता है कि यह समस्या हल कर ली गई है। मैं हमारे ईसाई नेता डॉ. एच.सी. मुखर्जी को उनके इस प्रस्ताव के लिये बधाई देना चाहता हूं कि धर्म के अधार पर स्थान-रक्षण नहीं होना चाहिए। मैं भी इस रक्षण को समाप्त करने के पक्ष में था। श्रीमान, आसाम के लिये मैंने कहा था कि इसाइयों के लिये कोई पृथक निर्वाचन क्षेत्र नहीं होना चाहिये और बाद में इस सभा के सब इसाई प्रतिनिधि उसी प्रस्थापना पर सहमत हो गये, क्योंकि हमने अनुभव किया कि धर्म के आधार पर किसी को एक दूसरे से भिन्न नहीं मानना चाहिये। एक मनुष्य और दूसरे मनुष्य में भेद करने के लिये धर्म का आधार नहीं होना चाहिये। हमें उस पर प्रसन्नता है, कि धर्म के आधार पर किसी जाति के लिये स्थान-रक्षण समाप्त कर दिया गया है। देशी राज्यों विषयक कठिनाइयों को आश्चर्यजनक प्रसार से हल किया गया है। इस का श्रेय राज्य मंत्रालय को है जिसने इस विषय में आश्चर्यजनक काम किये हैं।

अब, श्रीमान, मैं एक और विषय पर कुछ कहना चाहता हूं, और वह है छठी अनुसूची। मैं श्री एस.एन. मुखर्जी, मुख्य मसौदाकार, सर बी.एन. राव तथा डॉ. अम्बेडकर का व्यक्तिगत रूप में आभारी हूं कि उन्होंने इस छठी अनुसूची की रचना पर विशेष ध्यान दिया। मैं मसौदा समिति के सदस्यों का भी आभारी हूं जिन्होंने हमें उनके समक्ष बोलने का अवसर दिया। और मैं आसाम के हमारे मुख्य मंत्री का भी ऋणी हूं जिनकी भावना आसाम के पहाड़ी लोगों के प्रति बहुत सहानुभूतिपूर्ण है। छठी अनुसूची आसाम के पहाड़ी जिलों के विषय में है जहां आसाम के पहाड़ी लोग अपने प्रदेश में स्वयं अकेले ही रहते हैं, जिनकी अपनी भाषा और संस्कृति है और संविधान सभा ने मंत्रणा समिति की उप-समिति की सिफारिश को स्वीकार करके ठीक किया है जिसमें मेरे माननीय मित्र, श्री ए.वी. ठक्कर भी सदस्य थे। उप-समिति ने स्वीकार कर लिया कि इन विभिन्न जिलों के लिये परिषदें होनी चाहिये जिससे कि उन क्षेत्रों में रहने वाले लोग अपनी प्रतिभा तथा संस्कृति के अनुरूप उन्नति कर सकें। मुझे यह भी खुशी है, श्रीमान, कि खासी राज्यों को भी छठी अनुसूची में रख दिया गया है, क्योंकि उससे खासी जिले के लोगों का—जेन्तिया पहाड़ियों और खासी राज्यों का—एक प्रशासन बन सकेगा। मैं उन सब का अत्यन्त कृतज्ञ हूं जिन्होंने इस विषय में हमारी सहायता की है। मुझे अपने माननीय मित्र श्री चालिहा की आलोचना के विषय में भी कुछ कहना ही होगा, जिन्होंने इस सदन में दो बार उन शक्तियों की आलोचना की है जो छठी अनुसूची के अधीन जिला परिषदों को दी गई हैं। मेरे विचार में ऐसा करना उनकी गलती है। यदि वे समझते हैं कि आसाम के पहाड़ी जिलों के रहने वाले लोग अपना प्रशासन चलाने के और छठी अनुसूची के उपबन्धों द्वारा उन्हें

दी गई शक्ति का प्रयोग करने के योग्य नहीं हैं, तो उन्हें आकर उनकी सहायता करनी चाहिये, उन्हें भाई के समान अपने पहाड़ी क्षेत्रों के भाइयों की सहायता करनी चाहिये और इस प्रकार उन्हें बुद्धि देनी चाहिये जिससे कि वे अपने तरीके से अपना काम चला सकें, और वही चीज है जिससे उन्हें संतोष प्राप्त होगा और जिससे उन्हें शांतिपूर्वक रहने में सहायता मिलेगी। पहाड़ी क्षेत्रों के लोग शोषण से डरते हैं और यही कारण है कि वे जिला परिषदों की मांग करते हैं जिससे कि वे कुछ हद तक अपनी विधियां बना सकें और अपनी संस्कृति तथा स्वभाव के अनुरूप उन्नति कर सकें। मुझे बहुत प्रसन्नता है कि बहुत से ऐसे सदस्य हैं जिन्होंने ऐसे प्रशासन की वांछनीयता को समझा और मैं संविधान सभा का आभारी हूं कि उसने छठी अनुसूची का विरोध नहीं किया जिसमें कि पहाड़ी क्षेत्रों के लोगों के लिये बहुत अच्छे उपबन्ध हैं। मुझे विश्वास है कि यदि आसाम के लोग, जिन्हें वास्तव में इन पहाड़ी क्षेत्रों की, जो भारत के वास्तविक सीमान्त हैं, उन्नति में दिलचस्पी है, सहायता करेंगे, तो वहां ऐसा प्रशासन जमाने में कठिनाई नहीं होगी जो उन लोगों के लिये बहुत अच्छा होगा और शायद एक प्रकार से भारत के अन्य भागों में पंचायतों के लिये नमूना ही सिद्ध हो। आज, श्रीमान, इन क्षेत्रों में, जो भारत के सीमान्त पर हैं, आर्थिक कठिनाइयां और कष्ट हैं। भारत सरकार की सहायता की तत्काल आवश्यकता है।

बैठने से पहले बस एक बात और कहूंगा और वह है निदेशक सिद्धान्तों के अनुच्छेद 48 के विषय में। यह गोवध के निषेध का उपबन्ध है। मुझे आश्चर्य है कि क्या इस उपबन्ध का अर्थ यह होगा कि सब प्रकार की गायों और ढोरों का सब समयों पर वध निषिद्ध होगा? मेरा ख्याल यह है कि वह आशय नहीं है। यदि इस उपबन्ध का अर्थ यह है तो इससे राज्य पर महान भार आ पड़ेगा, किन्तु मैं समझता हूं कि यह आशय नहीं होगा। जरा खयाल कीजिये कि देश में लाखों गायें घास चारे बिना, रुग्ण सी घूमती फिरेंगी और उन पर कितना धन खर्च होगा और किसी भी देश पर वह कितना बड़ा भार होगा। उनमें सैंकड़ों खेतों में बेपरवाही से मर जायेंगी। किसी राज्य के लिये भी सब परिस्थितियों में गोवध बन्द करना लाभ का कार्य नहीं होगा। मैं समझता हूं कि इस अनुच्छेद से केवल दुधारू गायों तथा भारवाही ढोरों के वध का ही वर्जन होगा, जो जनता के लिये लाभदायक होगा। यदि इसका अर्थ अन्यथा हो, तो मैं समझता हूं कि यह संविधान पर एक कलंक होगा, और कुछ लोगों के लिये कष्टकर भी होगा, विशेषतः आसाम के पहाड़ी लोगों के लिये जो गोमांस भक्षण करते हैं और भोजन के लिये ढोर पालते हैं। यह उन लोगों के साथ भी अत्याचार होगा जो गायों की बलि देते हैं जैसे कि मुस्लिम हैं; आसाम के हिन्दू गोरखा भी दुर्गा पूजा के समय भैसों की बलि देते हैं। यदि इस अनुच्छेद का यह अर्थ निकाला गया कि सब ढोरों का समस्त कालों और परिस्थितियों में वध निषिद्ध होगा तो इससे बहुत गड़बड़ और अशांति हो जायेगी। यह मूल अधिकारों के विरुद्ध भी होगा। मेरे विचार में अनुच्छेद का यह अर्थ नहीं है।

मैं आपको धन्यवाद देता हूं, श्रीमान, और उन सब माननीय सदस्यों का भी जिन्होंने इस संविधान के बनाने में सहायता की है, और श्रीमान, आपने इस सभा को जैसे चलाया है, उस पर मैं आपको बधाई देता हूं। मैं मसौदा समिति को उसके परिश्रम पर और अफसरों को भी बधाई देता हूं जिन्होंने इसकी रचना में

[माननीय रेवरेण्ड जे.जे.एम. निकल्स राय]

भाग लिया है और सदस्यों की वक्तृताओं को लिखने में परिश्रम किया है। प्रतिवेदकों ने वक्तृताओं को लिखने में जो कार्यकुशलता बरती है उसे देख कर मुझे हर्षपूर्ण आश्चर्य है। उन्होंने सचमुच बहुत सफलता से कार्य किया है। मैं आपको धन्यवाद देता हूं, श्रीमान। इस संविधान को क्रियान्वित करने में भगवान हमारे देश की सहायता करे।

***डॉक्टर रघुवीर** (मध्य प्रदेश और बरार: जनरल): माननीय प्रधान जी, हमको इस देश में स्वतन्त्रता मिली, स्वराज्य मिला, गणराज्य मिला, लोकराज्य मिला। भारत का नया जन्म हुआ। इस जन्म में हमको आश्वासन दिया गया कि आर्थिक समुन्नति होगी, सामाजिक समुन्नति होगी, किन्तु एक प्रश्न रह गया और उसका इस संविधान में, इस कान्स्टीट्यूशन में, कहीं पर मुझे स्थान दिखलाई नहीं पड़ा और वह था भारतवर्ष की सांस्कृतिक स्थिति। जिस समय भी कोई देश दूसरे देश के ऊपर अपना राज्य जमाता है, जैसे अंग्रेजों ने इस देश पर अपना राज्य जमाया, तो उसका बड़ा भारी कर्तव्य यह होता है कि वह अपने राज्य को स्थायी बनाने के लिये, अपने राज्य की नीवें नीचे गाड़ने के लिये, वह कुछ ऐसा काम करता है कि जिससे जिस देश पर उसने अपना राज्य जमाया उस देश की जड़ों को वह ढीला करें, उस देश को वह दुर्बल बनायें। इसमें तीन बातें होती हैं। एक भाषा, दूसरा उसका धर्म और तीसरा उसका आदर्श। हमारी जाति के धर्म को उन्होंने नीचे गिराया। कितने प्रकारों से वह नीचे गिराया गया यह तो आज मेरा विषय यहां नहीं हो सकता। धर्म को यहां राज्य में स्थान नहीं मिला। संस्कृत का इतना सुन्दर शब्द 'धर्म' उन्होंने अंग्रेजों ने, तथा उनके अनुयायी भारतीयों ने, एक बड़े निकम्मे छोटे और संकीर्ण शब्द 'रिलीजियन' से जोड़ दिया। धर्म शब्द का अर्थ रिलीजियन न कभी हुआ और न कभी हो सकता है। रिलीजियन के लिये शायद "पन्थ" शब्द का प्रयोग हो सकता है किन्तु धर्म शब्द का प्रयोग इस अर्थ में कभी नहीं हो सकता। अंग्रेजों ने यहां इस का प्रयोग किया।

अंग्रेजों ने हमारी भाषा के स्थान पर अपनी भाषा को स्थान दिया। उसके पुनर्जन्म के लिये, विधान बनाने के लिये, हमको आवश्यकता थी कि जिन जिन बातों को तोड़कर अंग्रेजों ने अपना राज्य बनाने की चेष्टा की उन बातों को लौटाने की हम कोशिश करें जिससे हमारे देश का अपनापन भी इस देश में ठीक प्रकार से स्थापित हो सके। किन्तु संस्कृत शब्द 'धर्म' का इस संविधान में कोई स्थान नहीं है। मैंने अपने एक मित्र से बात की तो वह कहने लगे कि संविधान तो लाज (laws) है, जिन पर न्यायालयों में वादविवाद हो सकता है केवल वही बातें संविधान में आ सकती हैं। किन्तु यह देश केवल राज्य नियम नहीं चाहता, यह तो ऊंचा उठना चाहता है, जब हमारे इस देश को गौरव था, इस देश का धर्म था, हम उस समय ऊंचे थे, हम संसार के गुरु थे। वह अभिमान भी अंग्रेजों ने नीचे गिराया। उन्होंने हमारा इतिहास लिखा, आई.सीएस लोगों ने इस देश का इतिहास लिखा और उनकी भाषा में हमको पढ़ाया कि तुम ऊंचे नहीं थे, तुम बहुत छोटे से आदमी थे। तुम सदा अलग-अलग रहे, तुमने हार खाई, इत्यादि, इत्यादि। तो हमको आवश्यकता थी कि ऊंचा उठने के लिये हम सांस्कृतिक क्षेत्र में अपने मस्तिष्क की अभिव्यक्ति और उन्नति के लिये कुछ प्रयत्न करते। किन्तु वह बात नहीं आई। इसकी बड़ी आवश्यकता थी कि यह शब्द हम अपनी प्रस्तावना

में, अपनी प्रीएम्बुल में, रखते। हमने लिबरटी, ईक्वेलटी और फ्रैटरनिटी, तीन बड़े सुन्दर शब्द फ्रेंच इतिहास से लिये, किन्तु ये सुन्दर शब्द भारत के इतिहास में कभी क्रान्ति लाने में समर्थ नहीं हुये और जहां तक मैं देख सकता हूं कि अब भी इन शब्दों के नाम पर यहां क्रान्ति नहीं आवेगी।

हम दूसरे देशों से वे बातें ले सकते हैं जिनसे हमारे देश को वास्तव में लाभ हो। किन्तु जहां हमने इन तीनों शब्दों को अपने संविधान में रखा था, स्थान दिया था। तो क्या इस देश के प्राचीन शब्दों के लिये इसमें स्थान नहीं था। क्या 'राम राज्य' जैसे एक सरल शब्द को, जिसको ग्राम का एक एक बच्चा समझता है, इस संविधान में स्थान नहीं था? हमारे इतिहास में एक बड़ा सुन्दर शब्द 'मत्स्य-न्याय' आता है कि बड़ी मछली छोटी मछली को नहीं खाये। यह राजा का परम धर्म था कि धनी गरीबों को न सताये।

Exploitation of the people, exploitation of the poor by the rich, exploitation of the weak by the strong.

एक्सप्लाईटेशन किसी प्रकार का भी न हो। उसके लिये एक ऐतिहासिक शब्द, एक सहस्रों वर्षों के प्राचीन शब्द, मत्स्य न्याय, को इस संविधान में स्थान नहीं मिला।

इसी प्रकार से मैं जब एक बार सन् 1931 ई. में लीग ऑफ नेशन्स में गया तो वहां पर प्रेसीडेन्ट से बात हुई और मैंने कहा कि लीग ऑफ नेशन्स का मोटो तो वह होना चाहिये जो ईशोपनिषद में दिया हुआ है, यजुर्वेद में दिया हुआ है, अर्थात् 'मा गृधः'। इसी प्रकार से और आदर्शों को भी, जो मनुष्य के जीवन का आधार है, जो मनुष्य को ऊंचा उठाने वाली बातें हैं, जो उनकी आवश्यकताओं को दूर करने वाली बातें हैं, उनको इस संविधान में स्थान नहीं दिया गया। संसार में गणराज्य को बनाने वाला, फैलाने वाला, संगठित रूप से किसी बात का और किसी आदर्श का प्रचार करने वाला सबसे बड़ा संघ इस देश में बना और उस समय उनका जो परम सिद्धान्त था वह यह था 'धर्मम् शरणं गच्छामि', 'संघम् शरणं गच्छामि' (जो मेरा कर्तव्य है उसकी शरण जाता हूं, उससे भाग कभी नहीं सकता, जो मेरा संघ है उसकी शरण जाता हूं, उससे भाग कभी नहीं सकता)। क्या इस देश के संविधान में इसको नहीं आना चाहिये था? यह हमारे इतिहास में ऋग्वेद से लेकर नीचे तक मिलता है। हमें यहां एक रोग दिखलाई पड़ा और वह रोग था फूट का। वह परस्पर लड़ाई झगड़े का रोग था। इसलिये 'सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम्' यह आदर्श हमारे देश के सामने नहीं रखा गया। इसी प्रकार से राजा अश्वपति ने कहा था:

'न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो न मद्यपः। नानाहिताग्निर् नाविद्वान्। इत्यादि।' कि मेरे देश के अन्दर कोई चोर नहीं, कोई डाकू नहीं, कोई कायर नहीं, कोई मद्य पीने वाला नहीं और कोई अविद्वान् नहीं। क्या जब हम हिन्दी में, अपनी किसी भाषा में कहें कि दो और दो चार होते हैं तो वह गणित नहीं कही जायेगी? क्या मैथमैटिक्स तभी होगी जब यह कहें कि 'two and two make four'? क्या उसी बात को हम अपने शब्दों में कहें तो उसका महत्व घट जाता है? क्या जिन आदर्शों को हमने विदेशी भाषा में, विदेशी शब्दों में, विदेशी इतिहास के साथ सम्बद्ध वाक्यशैली में रखा है, यदि उस वाक्यशैली को मैं अपने प्रकार से अपनी भाषा में रखता तो वह विचार दूषित हो जाता?

[डॉक्टर रघुवीर]

हमारे साहित्य में एक और विचार था। उस विचार को यूरोप ने स्वीकार नहीं किया, और क्योंकि उस विचार को यूरोप ने स्वीकार नहीं किया, इसलिये आज हम भी उस विचार को स्वीकार नहीं करते। वह विचार था:

"कार्षापणं भवेद् दण्डयो यत्रान्य: प्राकृतो जन:।
तत्र श्रीमान् भवेद् दण्डय: सहस्रमिति धारणा।।"

अर्थात् कि जहां एक सामान्य व्यक्ति को आप 100 रुपये का दण्ड देते हैं तो वहां राजा हो या कोई बड़ा व्यक्ति हो तो उसको अधिक दण्ड दें। जो अपराध धनी व्यक्ति करता है तो उसके लिये उस अपराध के लिये 100 गुना या सहस्र गुना दण्ड हो जाता है। हमारे यहां इस संविधान में हमको कहीं भी ऐसी बात दिखाई नहीं पड़ी कि हमने इसके लिये यत्न किया हो। मैं अपने देश के इतिहास से जब कुछ बातें आपके सामने रखूं, यदि आपको वे अच्छी नहीं लगतीं तो आप उनको न लें, किन्तु जिस समय हमारे संविधान के सलाह देने वाले मंत्रदाता, बी. एन. राव और दूसरे सज्जन आयरलैंड में जा सकते हैं, जिस समय वे लोग स्विटरज़रलैंड और अमेरिका में जा सकते हैं, यह देखने के लिये कि दूसरे देश अपने राज्य का कारोबार किस तरह चलाते हैं, तो क्या इस देश में कोई ऐसा जानने वाला, लिखने पढ़ने वाला व्यक्ति विद्यमान नहीं था जो आपको यह बतलाता कि यह देश भी कुछ अनुभव रखता है, इस देश के रक्त में भी कुछ ऐसे विचार हैं जो लोगों के अन्दर घुसे हुये हैं और उनसे भी हमको लाभ उठाना चाहिये। यह बात हमारे समाने नहीं आई और यह एक दु:ख की बात है।

मेरे पास बहुत वक्त नहीं है, दो तीन बात कह कर मैं अपना भाषण समाप्त करूंगा। भाषा के सम्बन्ध में जो कि सभ्यता का एक बड़ा भारी अंश है, मुझे बड़ा हर्ष हुआ है कि हिन्दी को माना गया। सब भाईयों ने माना, सब प्रान्तों ने माना। मुझे बड़ा हर्ष है कि कोई भी एक भाषा सारे देश की भाषा मानी गई। किन्तु जिस प्रकार उसको माना गया और जिस प्रकार उसको 15 वर्ष तक हटा दिया गया है, उससे मुझे क्षोभ हुआ है। यह क्षोभ केवल मुझ को ही नहीं हुआ है बल्कि कई मित्रों को जो भारतीय भाषा के पक्षपाती थे, इसके लिये क्षोभ हुआ। किन्तु मेरा क्षोभ 100 गुना बढ़ गया जब विदेशी मित्र, दूसरे देशों के जो यहां पर राजदूत हैं, उनसे मेरी बात हुई। वह कहने लगे कि अभी तो तुम्हारे देश में अंग्रेज़ी का साम्राज्य रहेगा। मित्रो, इस बात को न भूलो, अच्छी प्रकार स्मरण रखो कि अंग्रेज़ अभी तक इस देश में बने हुये हैं। इस देश के अन्दर कोई भी और किसी देश का भी राजदूत विद्यमान नहीं जिस को यह बात अच्छी लगी हो। क्योंकि राजनीति से भाषा का सम्बन्ध है। योरूप के अन्दर किसी भी नैशनलिज़्म का निश्चय भाषा के आधार पर होगा, इसलिये वह लोग जानते हैं कि भाषा का राजनीतिक जीवन में क्या स्थान है। इसलिये अंग्रेजी को जिस समय आप देश के अन्दर रखते हैं तो आपका गठ जोड़ अंग्रेज़ी के साथ हो जाता है। यहां फ्रेंच व्यक्ति आये और वह कहने लगे कि फ्रेंच भाषा का स्थान यहां की यूनिवर्सिटियों में क्यों नहीं है। स्पेनिश भाषा का स्थान इस देश में क्यों नहीं है। अगर फ्रेंच और रूसी का स्थान यहां के विश्वविद्यालयों में होता तो फ्रेंच को बड़ी प्रसन्नता होती और रूस को बड़ी प्रसन्नता होती, इसलिये कि वह जानते हैं कि आप लोग उनके साहित्य को पढ़ सकते हैं और उनकी मैत्री कर सकते हैं। इसलिये राजनीतिक

दृष्टि से अंग्रेज़ी को इस देश में 15 वर्ष तक के लिये रखे रखना हमारे लिये उचित नहीं था। हिन्दी इस प्रकार परे रखी गई जैसे कि वह हमारे में घुस न आये। और अंग्रेज़ी इस प्रकार से कि अंग्रेज़ों के समय अंग्रेज़ी को जो स्थान प्राप्त नहीं था जो हमारे संविधान में अंग्रेज़ी को प्राप्त है।

यहां तक कि पार्लियामेंट के नियमों के अधीन जो कुछ नियम बनेंगे वह सब अंग्रेज़ी में। यदि दिल्ली की इलैक्टरिक कम्पनी नियम बनाती है कि हमारी ट्राम सर्विस सवेरे 5 बजे से रात के 11 बजे तक चलेगी तो उसको संविधान के नियमों के अधीन अंग्रेज़ी में ही छापना पड़ेगा। हिन्दी भाषा के साथ यह अत्याचार तो किया ही गया है फिर भी उसके अन्दर अंग्रेज़ी के अंक लिये गये। हमको इस प्रकार से पुचकारते हैं जिस प्रकार से बच्चों को पुचकारा जाता है। हमें कहा जाता है कि अंग्रेज़ी के जो न्यूमिरल्स हैं वे इंडियन न्यूमिरल्स के इन्टरनेशन फार्म हैं। यह तो किसी घाव पर नमक छिड़कने के समान है। यदि इस समय महात्मा गांधी जी जीवित होते तो मुझे विश्वास है कि वह इस बात को कदापि स्वीकार नहीं करते और संविधान के अन्दर अंग्रेज़ी को 15 वर्ष तक रखने की इजाज़त न देते।

ब्यूरोक्रेसी और नौकरशाही के जो लोग राज्य के सेवक भृत्य हैं वही राज्य के स्वामी बने बैठे हैं। मुकदमेबाज़ी को हटाने का इस देश में कोई यत्न नहीं किया गया है। इससे मुझे यह लगता है कि अंग्रेज़ों के 150 वर्ष तक इस देश में रहने से उन्होंने जिस प्रकार से यहां पर अपनी जड़ गहरी बनाई उससे दुगुनी गहरी जड़ आने वाले 15 वर्षों के अन्दर हो जायेगी। इसका अर्थ यह होगा कि इस देश की शक्ति अंग्रेज़ी जानने वालों के हाथ में होगी। सिर्फ एक बात रह गई जिस समय सारे भारतवर्ष में प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर चुनाव होगा तो उस समय ऐसे लोग चुनाव में आयेंगे जो अच्छी तरह से अंग्रेज़ी नहीं जानते। तो उस समय पर मैं अपनी आशा लगाये बैठा हूं कि अंग्रेजी का इस देश से बहिष्कार होगा और यह बहिष्कार इस देश की उन्नति के लिये परम आवश्यक है।

इसके पश्चात् मैंने भारतवर्ष की सीमा के बारे में एक दो शब्द कहने हैं। हमने भारतवर्ष में जो देशी राज्य थे उनको आत्मसात कर लिया है। किन्तु भारतवर्ष के हमने टुकड़े होने दिये और हमारे संविधान में ऐसी कोई बात नहीं जिससे यह पता लगे कि यह देश फिर एक बनेगा। जो लोग संस्कृति और साहित्य के पढ़ने वाले हैं उनको पता होगा कि पौराणिक काल में भारत की सीमा 'वक्षु' प्राकृत 'वखु' तक थी। इस नाम को ग्रीक में 'ओखुस' कहा जाता था और अंग्रेजी में उस का उच्चारण 'ओक्सेस' हो गया अब हटते हटते वह सीमा रावी तक आ गई है। मुगलों के समय दिल्ली साम्राज्य अफगानिस्तान तक विद्यमान था। और कई हालतों में वह अफगानिस्तान से परे भी विद्यमान था। आज पश्चिमी बंगाल और आसाम के बीच का इतना बड़ा टुकड़ा हमारे देश से काट लिया गया। उसके लिये देश क्या यत्न नहीं करेगा? चाहे यह काम युद्ध से हो, चाहे शान्तिपूर्वक। इस बात का इस समय प्रश्न नहीं है, यह तो भविष्य ही बतलायेगा। जाति के सामने यह लक्ष्य नहीं है, यह आदर्श नहीं है कि भारतवर्ष पूर्ण भारतवर्ष होगा, टुकड़े जो कट गये हैं उसके फिर भाग नहीं होंगे।

केवल इतना ही नहीं, हमने तो एक और भी अपने कर्तव्य की अवहेलना की, वह कश्मीर के सम्बन्ध में। कश्मीर के जो महाराजा हैं उन्होंने भारतवर्ष में

[डॉक्टर रघुवीर]

मिलने के लिये कहा। कश्मीर की जो जनता है वह भारतवर्ष के साथ मिलना चाहती है। कश्मीर में जम्मू प्रान्त के जो लोग हैं वे भारतवर्ष में मिलना चाहते हैं। कश्मीर में जो लद्दाख के लोग हैं वह शेष कश्मीर से अलग होकर भारतवर्ष में मिलना चाहते हैं और कहते हैं कि हम को भारतवर्ष में ले लो। किन्तु हमारी विधान सभा को, हमारी पार्लियामेंट को यह अधिकार नहीं होगा कि वह कश्मीर के बारे में कोई नियम बना सकें। हमारी सेना कश्मीर में शत्रु को बाहर निकालने के लिये गई और उसने अपना लहू बहाया और अनेकों प्रकार के कष्ट सहे और सह रही है। किन्तु कश्मीर के अन्दर भारतवर्ष का झण्डा अकेला नहीं लहराता। वहां एक और झण्डा लहराने की क्या आवश्यकता थी? मुझे इस बात का क्षोभ है कि इतना रुपया, इतनी सम्पत्ति और इतना लहू बहा कर कश्मीर को अपना न बना सके। हमारी सेना को आगे बढ़ने से रोका गया।

अन्त में मुझे एक बात और कहनी है वह यह है कि मुझे यह दिखाई देता है कि हम अभी तक अंग्रेज़ों के चंगुल से बाहर नहीं निकले। हमारी राजनीति में अंग्रेज़ों का बड़ा भारी हाथ है। अंग्रेज़ों को हमने अपने देश से बाहर निकाल दिया है किन्तु वह हमारे दिलों में घर किये हुये हैं। जैसा कि लार्ड मेकाले ने, शिक्षा आरम्भ करने के समय, प्रसिद्ध वाक्य कहे थे: "अंग्रेज़ी पढ़कर भारतवर्ष के लोग काले तो रहेंगे किन्तु उनके विचार और उनका रहन सहन सारा अंग्रेज़ी हो जायेगा।" वही सारा दृश्य हमारे सामने है। इन्हीं विचारों को हमारे संविधान में रखा गया है और उसमें भारतीयता का कोई भी अंश नहीं। मुझे आशा है कि कुछ वर्षों में, यह संविधान जिस रूप में पास किया गया है, यह संविधान उस रूप में नहीं रहेगा, इसका भारतीय स्वरूप बनाना होगा। भारतवर्ष की जो विशेष आवश्यकतायें हैं उनकी पूर्ति संविधान में होनी चाहिये थी।

***श्रीमती रेणुका रे** (पश्चिमी बंगाल): अध्यक्ष महोदय, हम अब तीन वर्ष बाद अपने संविधान-निर्माण की अंतिम स्थिति में पहुंच रहे हैं। स्वभावत:, संविधान बनाने के लिये तीन वर्ष बहुत लम्बा समय दिखाई देता है। किन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि यह संविधान सभा सर्वप्रथम बनी थी, तब से हमारे देश में कई परिवर्तन जल्दी-जल्दी हो गये। देश के विभाजन से, संविधान-निर्माताओं का प्रादेशिक क्षेत्र कम हो गया, और शक्ति-हस्तान्तरण से यह सदन सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न निकाय बन गया, जिसे स्वतन्त्र देश का संविधान बनाना था और संसद के रूप में भी काम करना था। इस प्रकार, उसके परिश्रम के सात मास अधिकांश में व्यर्थ गये क्योंकि परिवर्तन करने थे। संविधान सभा का अधिकांश समय आपात की स्थिति को संभालने में तथा संसद की रोजाना समस्याओं को निबटाने में ही खर्च हो गया। फिर, श्रीमान, भारतीय राज्यों के एकीकरण से, ऐसे परिवर्तन करने पड़े जिनकी एक वर्ष पहले भी कोई कल्पना नहीं की गई थी। श्रीमान, जब इस देश का विभाजन हुआ, और मेरे प्रांत तथा पंजाब जैसे प्रांतों को खंडित किया गया, तब उन लोगों ने जो हमारे मित्र नहीं थे, यह सोचा और आशा की कि भारत शीघ्र ही बलकान के समान खंड खंड हो जायेगा। उस समय कौन कल्पना कर सकता था, हम में से किसे खयाल था कि दो ही वर्षों में, हैदराबाद सहित सब देशी राज्य एक समूचे एकक के अभिन्न अंग बन जायेंगे, और हम समूचे भारतीय संघ के लिये, राज्यों और प्रांतों के लिये समान रूपेण एक संविधान बनायेंगे? श्रीमान, हम इन घटनाओं से निकट संपर्क में रह रहे हैं अत: हमारे लिये इस रक्तहीन क्रांति का

पूर्ण महत्व समझना कठिन है जो सरदार पटेल की प्रतिभा का जीता जागता प्रमाण है। मैं अनुभव करती हूं कि केवल भावी संतति ही इन घटनाओं का ठीक-ठीक मूल्य आंकेगी?

श्रीमान, अब संविधान के विषय में, मुझे कहना पड़ेगा कि यह बहुत भारी संविधान है। शायद यह संविधान संसार के सब संविधानों से बड़ा है। मैं उन लोगों में से थी जिनकी यह धारणा थी कि इसमें विस्तार की बातें न रखना अच्छा होता, और संविधान में अधिक व्यापक बातें ही रखी जातीं। श्रीमान, एक लिखित संविधान चाहे कितना ही लचकदार हो, फिर भी वह बहुत हद तक अपरिवर्तनशील ही होगा। मेरे विचार में, यथासंभव इसकी अपरिवर्तनशीलता को कम करने के लिये यह अच्छा होता कि अधिक विस्तार की बातें न रखी जातीं। किन्तु इस सदन में इस युक्ति को माना गया कि हमें बहुत सी उलझी हुई समस्याओं को निबटाना है, और इस देश में जीवन की परिस्थितियां इतनी भिन्न-भिन्न हैं कि विस्तार की बातें अत्यावश्यक हैं। किन्तु मैं समझ नहीं पाती कि हमने इतनी विस्तार की बातें क्यों रखी हैं कि राज्य के उच्च प्रतिष्ठित अधिकारियों, राष्ट्रपति तथा न्यायाधीशों आदि के वेतन तक संविधान में रख दिये हैं। इस प्रकार हमने संसद के साधारण कर्तव्यों को क्यों हड़प लिया है? जो वेतन रखे गये हैं उनकी राशि का तो प्रश्न ही अलग है, मैं तो यह बताना चाहती हूं कि आधुनिक जगत में, जहां धन का मूल्य सदा बदलता रहता है, आज 5000/- रुपये की जो रकम है कल उसका मूल्य केवल 500/- या 5/- ही रह सकता है। अतएव संविधान में वेतन की ठीक ठीक राशि निर्धारित करने से क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है?

श्रीमान, संविधान के वर्तमान रूप के विषय में, मैं अनुभव करती हूं कि चाहे उसमें कई त्रुटियां हों, और हमारी प्रस्तावना के उद्देश्यों से एक स्थान पर हम ज्यादा भी हट गये हैं, फिर भी यह समूचा संविधान उन उद्देश्यों को पूरा कर सकता है जो हमने निश्चित किये हैं।

आखिर इसके निर्माता वे स्त्री और पुरुष हैं जो इस देश के प्रतिनिधि हैं किन्तु जो बहुत भिन्न-भिन्न संस्कृतियों के हैं, भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों वाले हैं जिन के कई विषयों पर भिन्न-भिन्न विचार हैं, और इस प्रकार यह संविधान समझौते के रूप में बनाया है; और इसलिये यह कहा जा सकता है कि हम एक समझौता कर पाये हैं, यद्यपि हम में से कई व्यक्ति कई खंडों पर बहुत कुछ कह सकते हैं।

जहां तक इस संविधान के मूल अधिकारों का सम्बन्ध है, मेरा ख्याल है कि अधिकांश में वे ऐसे हैं कि यदि उन्हें हमारे लोगों को ठीक प्रकार समझाया जाये तो ऐसी कोई बात नहीं है जिसे वे स्वीकार या पसन्द न करें। विशेषत: मैं मूल अधिकार का निर्देश करना चाहती हूं जिससे बहुत फर्क पड़ जायेगा और सचमुच समानता हो जायेगी: "राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान अथवा इनमें से किसी के आधार पर विभेद नहीं करेगा..." यह अधिकार अब न्याय्य मूल अधिकार है जिसे न्यायालय के द्वारा क्रियान्वित कराया जा सकता है और यदि कोई ऐसी विधियां हैं, सामाजिक और जो न्याय्य अधिकार के इस सिद्धान्त के विपरीत हों, तो उन विधियों को समाप्त कर देना होगा।

यह अत्यन्त दुर्भाग्य की बात है कि यद्यपि इन मूल सिद्धान्तों में राजनैतिक अधिकारों को रखा गया है तथापि आज नागरिकों के आर्थिक अधिकारों को न्याय्य

[श्रीमती रेणुका रे]

अधिकारों के रूप में नहीं रखा जा सका है। हमारे देश में स्थितियां ऐसी हैं कि हमारे लिये इस समय यह सम्भव नहीं हो सका है कि उन्हें मूल अधिकारों के रूप में रखें जो न्यायालय के द्वारा क्रियान्वित हो सकें। उन्हें राज्य की नीति के निदेशक सिद्धान्तों के रूप में रखा गया है। श्रीमान, यह और भी दुर्भाग्यपूर्ण है कि राज्य की नीति के इन निदेशकों में नागरिकों के कुछ अत्यन्त महत्वपूर्ण अधिकार हैं जिनके साथ कई कम महत्वपूर्ण बातें रख दी गई हैं। इसके साथ ही, मेरे विचार में, निराशा की कोई बात नहीं है क्योंकि संसद के लिये और भविष्य की सरकार के लिये यह सम्भव है कि वह इन अधिकारों को, जो अब निदेशकों के रूप में हैं, निकट भविष्य में आर्थिक अधिकारों का और मूल अधिकारों का रूप दे दें।

श्रीमान, लोकतन्त्र में केवल राजनीतिक लोकतन्त्र नहीं होता, और यद्यपि यह सर्वथा सत्य है कि हमने ऐसा संविधान बनाया है जिससे वयस्क मताधिकार के कारण इस देश में राजनीतिक लोकतन्त्र स्थापित हो जायेगा, पर यह बात भी उतनी ही सत्य है कि इस संविधान में नागरिकों के आर्थिक अधिकारों का ऐसा प्रभावी उपबन्ध नहीं किया गया है जैसा सम्भव हो सकता था, यद्यपि उन अधिकारों की प्राप्ति में कोई रुकावट भी नहीं है।

मैंने कुछ समय पूर्व कहा था कि एक महान त्रुटि है, मूलाधिकार में एक प्रतिबन्ध है जो इस संविधान पर ही कलंक है। जब कि प्रत्येक दूसरा आर्थिक अधिकार राज्य की नीति के निदेशकों में निहित है, निजी सम्पत्ति का अर्जन करने और उसे रखने का अधिकार ही मूल न्याय्य अधिकार है। केवल वह अनुच्छेद 13(च) में ही नहीं है किन्तु मूल अधिकारों के अनुच्छेद 31 के कारण वह और भी सीमित हो गया है, यहां तक कि उस समय की संसद को भी उस प्रतिकर की राशि और मूल्य को अन्तिम रूप से निर्धारित करने की शक्ति नहीं होगी, जो राष्ट्रहित में सम्पत्ति को ले लेने पर दे देना होगा।

श्रीमान, अनुच्छेद 31 में जो अपवाद रखे गये हैं, उनसे भी यही पता चलता है कि ये अधिकार कितनी दृढ़ता से सीमित किये गये हैं। कुछ प्रांतों में जमींदारी सम्पत्ति को मुक्त किया गया है और उनके लिये भी अवधि है। इसका अर्थ यह है कि अन्य सब प्रकार की सम्पत्ति के विषय में और उस जमींदारी सम्पत्ति के विषय में भी, जिनके विषय में निर्धारित अवधि के अन्दर विधान नहीं बन पाता, संसद को कोई शक्ति नहीं होगी। मैं अनुभव करती हूं कि इस मामले में बहुत गड़बड़ थी। कई लोगों का यह विचार प्रतीत होता था कि यदि संसद को ही प्रतिकर के निश्चय करने का अधिकार होगा तो शायद कोई प्रतिकर दिया ही न जाये। श्रीमान, मुझे विश्वास है कि आप मुझ से सहमत होंगे, और सदन भी मुझ से सहमत होगा, कि कोई सांविधानिक सत्ता कभी ऐसे सिद्धान्त निश्चित नहीं कर सकती थी जिनसे कोई भी प्रतिकर न दिया जाये। अत: मैं समझती हूं कि जब यह प्रश्न उठे थे तब उन्हें समझने में बहुत गड़बड़ थी, और मैं अनुभव करती हूं, और मैं विनम्रता से निवेदन करना चाहती हूं, कि हम में से बहुत से सदस्यों ने पूरी तरह समझा ही नहीं कि हम क्या कर रहे थे, जब कि हमने इस खंड को वर्तमान रूप में संविधान में रखने दिया था।

शायद भावी संतति हमारे विषय में कह सकती है कि यहां हमने भविष्य के लिये, सदा के लिये आर्थिक ढांचा निश्चित करने का प्रयत्न अवश्य किया था,

शायद केवल एक ही संतोषप्रद बात है कि हम संविधान का संशोधन करके इसे बदल सकते हैं, और मुझे विश्वास है, श्रीमान, कि शीघ्र ही ऐसा संशोधन करना आवश्यक होगा।

आखिर, संविधान तो केवल कागज़ का ही लेख्य है। उसकी सफलता या असफलता का निर्णय तो इस बात से होगा कि उस पर कैसे अमल किया जाता है। हम इस संविधान के बनाने वाले हैं और विनम्रता के साथ, इतने लोगों में समझौते के रूप में, हमने यथसंभव सर्वोत्तम संविधान बनाया है, यद्यपि हमें मानना चाहिये कि कई त्रुटियां रह गई हैं। किन्तु निर्माता ही इस संविधान को क्रियान्वित करेंगे, जो इसे जीवन तथा श्वास प्रदान करेंगे, जो वास्तव में निश्चय करेंगे कि इस पर कैसे अमल किया जाये। उन पर यह निर्भर है कि वे इसका मूल्य स्थिर करें और हो सकता है वे इसे गिरा दें, तोड़फोड़ दें, पंगु बना दें और इन्हीं मूल सिद्धान्तों और अधिकारों का, जो नागरिकों की सुरक्षितता के लिये हैं, ऐसा प्रयोग करें कि उनसे नागरिकों का अहित हो जाये। वास्तव में इस पीढ़ी और अगली पीढ़ी के निर्माता ही इस संविधान को क्रियान्वित करेंगे, और उन पर ही इसकी सफलता या असफलता निर्भर होगी। हमारा काम यह कहना नहीं है कि हमने अपना कार्य ठीक किया है या नहीं। भावी संतति ही वास्तव में इसका निर्णय करेगी। जैसा कि मैं कह चुकी हूं, इसमें संशोधनों की आवश्यकता है जो हममें से कुछ का ख्याल है कि निकट भविष्य में ही होने चाहिये। इस संविधान को क्रियान्वित करने के अनुभव को देखकर, इसमें कई रूपभेद करने होंगे जिससे कि यह हमारे राष्ट्र के स्वभाव के अनुरूप तथा अनुकूल बन जाये।

श्रीमान, समाप्त करने से पूर्व, मैं उन लोगों का साथ देना चाहती हूं जिन्होंने आपके प्रति कृतज्ञता प्रकट की है क्योंकि आपने इस सदन के सदस्यों के प्रति साहस और धैर्य और मधुर सहिष्णुता दिखाई है।

मैं मसौदा समिति के योग्य सदस्यों और उसके सदस्यों को भी धन्यवाद देना चाहती हूं और विशेषत: मैं श्री टी.टी. कृष्णमाचारी के विषय में कुछ शब्द कहना चाहती हूं जिन्होंने इन प्रतिभाशाली वकीलों के समान ही प्रयास और परिश्रम किया है जिनके बीच उन्होंने अनेक अवसरों पर मानवीय भावना का प्रवेश किया था। हम सांविधानिक परामर्शदाता सर बी.एन. राव के भी आभारी हैं जिन्होंने पक्षपात से रहित होकर हमें कानूनी दावपेच समझाये और उन्हें स्पष्ट किया।

श्रीमान, अन्त में मैं कहना चाहती हूं कि ईश्वर करे हम इस संविधान को इस पीढ़ी में और आने वाली पीढ़ी में ऐसे प्रकार से क्रियान्वित कर सकें कि राष्ट्रपिता ने जो उच्च आदर्श रखे थे वे इस देश के निवासियों के लिये वास्तव में एक जीती जागती चीज बन जाये। गांधी जी का समाजवाद मानव जगत के लिये इस देश की व्यवहारिक देन बन जाये।

***माननीय श्री के. संतानम** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, गत तीन वर्ष में कई अवसरों पर मैं संविधान-निर्माण की धीमी गति पर कुछ अधीर सा हो उठा था। मुझे भय था कि ऐसी बात न हो जाये जिससे कि हमारा संविधान अनिश्चित काल के लिये रुक जाये। वह असाध्य विपत्ति होती। हमें सब को पता है कि चीन में जब संविधान निर्माण में अनुचित विलम्ब आया तब क्या हुआ, और जब अन्त में उस संविधान को क्रियान्वित करने के प्रयास किये गये तब वह टूट गया था। अत:, यह सौभाग्य है कि हमने अपना कार्य समाप्त कर लिया है।

[माननीय श्री के. संतानम]

पिछली बातों को सोचता हूं तो मैं अनुभव करता हूं कि ये तीन वर्ष अत्यधिक नहीं हैं। वास्तव में एक वर्ष पहले समाप्त करने पर जैसा संविधान बनता उससे अब हम अधिक अच्छा संविधान बना सके हैं। इस संविधान के विषय में बहुत सी आलोचनाएं की गई हैं। मेरे माननीय मित्र श्री नजीरुद्दीन अहमद ने मसौदा-लेखन के विषय में शिकायत की है परन्तु समूचे को पढ़ते हुए यदि हम स्पष्टता तथा अर्थ निश्चितता की कसौटी पर कसें तो, मेरे विचार में, हम सचमुच बहुत अच्छा संविधान बना पाये हैं।

श्रीमान, मेरे मित्र श्री पातस्कर ने कुछ न्यायायुक्त आलोचना की है कि प्रांतीय स्वायत्तता में हस्तक्षेप किया गया है। मैं सहमत हूं कि कुछ मामलों में अनावश्यक उपबन्ध रखे गये हैं जिससे यह प्रतीत होने लगता है कि इस संविधान में प्रांतीय स्वायत्तता उससे भी बहुत कम है जो भारत शासन अधिनियम 1935 के अन्तर्गत थी। परन्तु फिर भी मेरा सुझाव है कि हमें सब बातों को उचित प्रकार से देखना चाहिये। मैं नहीं समझता कि इस संविधान में प्रान्तीय स्वायत्तता की मात्रा कम की गई है, और यह मात्रा न्याय्य है। संविधान द्वारा इसकी रक्षा की गई है और इसमें न्यायालयों की शक्ति को बढ़ा भी दिया गया है। वास्तव में मूल मसौदे से अन्तिम मसौदे तक आते आते शक्ति कार्यपालिका से संसद को और संसद से न्यायापालिका को हस्तान्तरित हुई है। मैं कह नहीं सकता कि यह बुद्धिमानी है या नहीं, किन्तु हस्तान्तरण ऐसे ही हुआ है और उसके परिणामस्वरूप एक संविधान बन गया है जो संघानीय प्रकार का है और संघानवाद की रक्षा न्यायपालिका ऐसी अच्छी तरह करेगी कि उसे संविधान को बदले बिना तोड़ा नहीं जा सकता। अतएव मैं नहीं समझता कि प्रांतीय स्वायत्तता को कोई विशेष क्षति पहुंची है।

श्रीमान, हमें अपने संविधान में एक बात की सराहना करनी चाहिये, जो इसका आधार है, कि समूचा संविधान भारत के समस्त लोगों की इच्छा पर आधारित है। हमारे विगत इतिहास को देखते हुए, संघीयता अत्यन्त महत्वपूर्ण है। श्रीमान, यदि हम अवशिष्ट शक्तियों को प्रांतों के पास रहने देते तो इसका यह अर्थ हो सकता है कि प्रभुता भारतीय जनता के भागों के पास होती, समूची भारतीय जनता के पास नहीं। आज समूची भारतीय जनता की ही इच्छा इस संविधान में निहित की गई है।

इस सम्बन्ध में, हमें यह समझना है कि यह संविधान, जहां तक देशी राज्यों का सम्बन्ध है, संधियों पर आधारित नहीं है। संधियों का मूल्य उसी हद तक है कि उन्हें संविधान में निहित किया गया है अथवा अभिज्ञात किया गया है। भारत की अखंडता उन संधियों पर निर्भर नहीं है जो राज्य मंत्रालय ने अन्य राज्यों से की है। वे आरम्भ में उन्हें संविधान सभा में लाने के लिये किये गये थे। एक बार संविधान लागू होते ही वे सब संधियां संविधान से ही अपना प्राधिकार प्राप्त करेंगी। संविधान ही उच्चतम तथा मूल विधि है। अनुसूची में उल्लिखित भारत के किसी भाग को, संविधान के संशोधन के बिना, किसी प्रकार अलग नहीं किया जा सकता। अतः केवल भारत की समस्त जनता ही अनुसूची में उल्लिखित भारत के किसी भाग को भारत से बाहर निकलने की अनुमति दे सकती है। उसके बिना कोई भी भाग अपनी इच्छा से किसी प्रकार अलग या पृथक होने की मांग नहीं कर सकता। वह बहुत बड़ी चीज है।

***श्री के. हनुमंथैय्या** (मैसूर राज्य): किसी ने उस अधिकार का दावा नहीं किया है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** मैं नहीं चाहता कि देशी राज्यों के प्रतिनिधि संधियों के आधार पर किसी अधिकार का दावा करें।

श्रीमान, मुझे कुछ आश्चर्य सा हुआ जब कि मेरे माननीय मित्र सेठ दामोदर स्वरूप ने यह शिकायत की कि इस संविधान को भारत के लोग स्वीकार नहीं करेंगे और कि इससे उन्हें यथेष्ठ वस्तु नहीं मिलती। मैं जानना चाहता हूं कि वे क्या चाहते हैं। इस संविधान से भारत के लोगों को अधिकार मिल जाता है कि वे जो चाहें सो करें। यदि मैं उनकी बात को ठीक समझा हूं तो उनकी शिकायत यह है कि यह संविधान भारत के लोगों को कुछ करने से रोकता है। यह भारत के लोगों पर कुछ भी थोपता नहीं। संविधान में ऐसी कोई बात नहीं है जिससे भारत के लोगों को पूर्णतया समाजवादी गणराज्य स्थापित करने में रुकावट हो। किन्तु वे चाहते हैं कि हम भारत के लोगों पर बाहर से कोई वस्तु लाद कर उन्हें अपनी स्वतन्त्र इच्छा का प्रयोग करने से रोकें। श्रीमान, इस संविधान का उद्देश्य यह है कि जनता की इच्छा ही चले और इस संविधान में कोई ऐसी बात नहीं है जिससे किसी प्रकार उसमें बाधा हो।

श्रीमान, मैं इस प्रश्न के गुणावगुण पर जाना नहीं चाहता। मेरे विचार में हमें अब पूर्ण लोकतंत्र मिल गया है जो किसी संविधान से मिल सकता है। वह लोकतंत्र कैसे क्रियान्वित होगा, उसे केवल राजनीतिक लोकतन्त्र ही नहीं, वरन औद्योगिक लोकतन्त्र और सामाजिक लोकतन्त्र बनाने में किस हद तक सफलता मिलेगी, यह तो उन पर निर्भर होगा जो इस संविधान पर अमल करेंगे भारत की जनता की और भारतीय लोगों द्वारा बनाये गये नेताओं की व्यापक इच्छा पर निर्भर होगा। किसी संविधान में इन बातों की व्यवस्था नहीं की जा सकती। संविधान में केवल यही उपबन्ध हो सकता है कि जनता की इच्छा चलेगी और मेरे विचार में इस संविधान में यह बात पूरी तरह रख दी गई है। अतएव, श्रीमान, यह अपेक्षित है कि हमें आलोचना करने की बजाय आगे से इस संविधान की पवित्रता की भावना उत्पन्न करनी चाहिये। जनता को यह विश्वास दिलाने पर ही यह पवित्र बनेगा कि वे इस संविधान के द्वारा जो चाहें प्राप्त कर सकते हैं, और तभी कोई सैनिक शक्ति या कोई अन्य शक्ति संविधान को छल बल से समाप्त नहीं कर सकेगी। यही बड़ी बात है जो अपेक्षित है। इस संविधान की कमियों को समुचित संशोधनों द्वारा यथासमय संशोधित किया जा सकता है। मेरे विचार में बहुत ही कम संशोधन करने होंगे। आने वाले कई दशकों में शायद कोई संशोधन करना ही न पड़े। वर्तमान संविधान इतनी अधिक और इतनी पूर्ण शक्तियां देता है कि संविधान को लोकप्रिय बनाने के लिये उपाय किये जायें। मैं एक सुझाव देना चाहता हूं, श्रीमान, कि इस सभा के प्रत्येक सदस्य को आपके हस्ताक्षर सहित संविधान की एक प्रतिलिपि दी जाये जो भावी संतति को स्मृति के रूप में मिल सके।

***श्री आर.के. सिधवा:** वह कोई मौलिक सुझाव नहीं है, राष्ट्रपति उस आशय की घोषणा पहले ही कर चुके हैं।

***अध्यक्ष:** श्री सिधवा किस घोषणा का निर्देश कर रहे हैं?

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान, यह घोषणा कि संविधान पूर्ण होने के पश्चात सदस्यों को उनके हस्ताक्षरों सहित दिया जायेगा।

***अध्यक्ष:** मैंने ऐसी कोई घोषणा नहीं की थी; किन्तु ऐसा हो सकता है।

***माननीय श्री के. सन्तानम:** मुझे यह सुझाव देना है कि राष्ट्रपति द्वारा हस्ताक्षर सहित सजिल्द संविधान प्रत्येक सदस्य को दिया जायेगा। जिससे वह भावी संतति के लिये स्मृति के रूप में रखेगा। मेरा यह भी सुझाव है कि ये प्रतियां सब सार्वजनिक संस्थाओं को दी जायें। विश्वविद्यालयों को भी कहा जाये कि वे कुछ भावी वर्षों के लिये संविधान को एक अनिवार्य विषय बना दें और प्रत्येक स्नातक इस संविधान की परीक्षा पास करे ताकि इस संविधान के उपबन्धों से सब परिचित हो जायें।

श्रीमान, मैं यह भी सुझाव देता हूं कि जैसे आपने वचन दिया है, निर्वाचन शीघ्र ही होना चाहिये और संविधान पर यथासम्भव शीघ्र ही पूर्णत: अमल किया जाना चाहिये। यदि संविधान के आरम्भ होने और संसद द्वारा उस पर पूर्णत: अमल होने के बीच बहुत विलम्ब होगा तो संविधान का मूल्य कम हो सकता है और उसका जनता पर शायद पर्याप्त प्रभाव न पड़े। अतएव यह आवश्यक है कि निर्वाचन यथासंभव शीघ्र होने चाहिये—हद से हद 1951 के प्रारम्भ में हो जाने चाहिये। मुझे आशा है कि यह हो जायेगा।

अंततोगत्वा, मेरे विचार में मसौदा समिति का कार्य सब प्रशंसातीत है। विशेषत: अंतिम कुछ मास में उन्हें इतनी जल्दी करनी पड़ी है, उनके पास इतना कम समय रहा है कि आश्चर्य है कि उन्होंने कार्य कैसे किया है। मुझे यह भी उल्लेख करना चाहिये। कि संविधान पर, केवल सदन के प्रांगण में ही विचार नहीं हुआ है, वरन कांग्रेस दल की बैठकों में बहुत ध्यानपूर्वक विचार किया गया है। मैं नामों का उल्लेख नहीं करना चाहता, किन्तु दल के कुछ व्यक्तियों ने प्रत्येक खंड पर और प्रत्येक अनुच्छेद पर विचार करने में बहुत परिश्रम किया और उन बैठकों में बहुत से सुधार किये गये। यदि वे इस प्रकार इस पर विचार नहीं करते तो संविधान ऐसा अच्छा नहीं बनता जैसा कि अब बन पड़ा है। कुछ मिला कर हमने सफलता से कार्य किया है और मुझे आशा है कि यह संविधान भविष्य में सन्तति को वर्तमान युग के महानतम कार्य के रूप में प्राप्त होगा।

***अध्यक्ष:** हमारे उठने से पूर्व, मैं सदन से यह जानना चाहता हूं कि क्या वे मध्याह्न के पश्चात बैठना चाहेंगे ('नहीं श्रीमान' और 'मध्याह्नतर में एक घंटा' की ध्वनियां)। मुझे यह सुझाव दिया गया है कि आज शनिवार होने के कारण सदस्यों को अन्य कार्य करने हैं और इसलिये हमें मध्याह्न के पश्चात् बैठना नहीं चाहिये। यदि सदन की यही इच्छा है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। क्या आप आज बिल्कुल नहीं बैठना चाहते?

***अनेक माननीय सदस्य:** मध्याह्नतर सत्र नहीं, श्रीमान,

***अध्यक्ष:** ऐसा प्रतीत होता है कि सदस्य दोपहर बाद सत्र नहीं रखना चाहते। यदि सदन की यही इच्छा है मेरे विचार में, मुझे अब यही पता लगता है कि बहुमत का यही विचार है, तो हम सोमवार को प्रात:काल के 10 बजे समवेत होंगे।

तत्पश्चात सभा सोमवार, तारीख 21 नवम्बर, 1949 के 10 बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

GIPD–HS–296 PSD-24–1252–320